मनोविनोद

पं० श्रीधर पाठक [illegible]

[illegible] कविता का संग्रह

"काव्य शास्त्र विनोदेन काल[illegible] गच्छति धीमताम्"

[illegible]VINODA

MIS[illegible]LLANE[illegible] [illegible] AND SO[illegible]

[illegible]

[illegible]DHARA PATHAKA

[illegible]ARES [illegible]ARIPRAKASH PRE[illegible]

19[illegible]0.

मनोविनोद

पं० श्रीधर पाठक रचित

स्फुट कविता का संग्रह

"काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्"

MANOVINODA

MISCELLANEOUS POEMS AND SONGS

BY

PANDIT SRIDHARA PATHAKA

BENARES: HARIPRAKASH PRESS.

1900.

PRITED AT THE HARIPRAKASH PRESS
BENARES, BY AMIR SINHA.

सूची

—o—

शोधन ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७	४	है	हे
२४	१९	कहकं	कहके
४१	१४	भकास	आकास
४६	१८	रहैन	रहेन

८	भ्रमाष्टक की तिथि	(मई, १८८४)
६२	कृष्णगुणगान ,,	(१७. ९. ८१)
६३	गोपी विलाप ,,	(१७. ९. ८१)

वक्तव्य

सन् १८८२ में पं० श्रीधर पाठक ने अपनी छात्रा-वस्था की कुछ कविता का एक संग्रह, " मनोविनोद " के नाम से प्रकाशित किया था।

पद्य रचना में रुचि पाठक जी को सदा स्वाभाविक रही है, परन्तु सीखने का प्रयत्न उन्होंने कभी नहीं किया।

सन् १८८२ के " मनोविनोद " में जो पद्य छपा, उन्हें अब अच्छा नहीं लगता। उस्में क्लिष्टता, अस्पष्टता आदि अनेक अवगुण हैं; यद्यपि अनेक रसिक जन उस्में ये दूषण नहीं पाते।

सन् १८८६ में पाठक जी ने " एकान्तवासी योगी " और सन् १८८९ में " ऊजड़ गाम " नामक काव्य, अंग्रेज़ी से उल्था करके प्रकाशित किये। इन्का हिन्दी रसिकों ने विशेष आदर किया।

उन्हीं रसिकों के अनुरोध से पाठक जी की स्फुट कविता का यह संग्रह, उसी पुराने "मनोविनोद" के नाम से प्रकाश करने का साहस किया गया है। आशा है अनेक भाषा रसिकों को यह प्रिय होगा [१]।

आगरा
१५ मई १९००

१ इस ग्रन्थ में जो पद्य संगृहीत है अधिकांश " हिन्दी प्रदीप, " " भारतेन्दु " आदि पत्रों में समय समय प्रकाशित हो चुका है।



मनोविनोद

मंगलाचरण

यस्य दुर्ज्ञेय भावस्य लीला तत मिदञ्जगत्
ब्रह्माण्डमखिलं यस्य अखण्ड उदरे स्थितम्
य एकस्सर्वभूतानाम्मूलभूतो महाप्रभुः
यस्मान्नैवास्ति कुत्रापि किञ्चित्परतरङ्क्वचित्
यस्मात्सञ्जायते सर्वं सर्वं यस्मिन्प्रवर्त्तते
यस्मिन्संलीयते सर्वन्तम्परम्प्रणमाम्यहम्

(७. ४. ८१)

स्मरणीयः प्रथमम्प्रभुः प्रभा यस्य सर्वत्र
यच्चरणं शरणं सतां जगता मिह चाऽमुत्र
जगदखिल न्तस्यैव लघुलीलाकृत माभाति
स्वय न्न किञ्चि ज्जायते सेदं शश्वत् पाति

(१२. ९. ८३)

किया चाहिये पहले उस्का स्मरन्
कि जिस्के चरन में जगत का शरन्

य सारा जगत् उस्की करतूत है
नहीं इस्में कुछ भी स्वयम्भूत है
नहीं होता कुछ उस्की इच्छा बिना
उसी की है जीवों में एक प्रेरना
परब्रह्म, निर्गुन, निराकार तू
स्वय म्भूत संसार आधार तू
शरन् तेरे हूं मैं कृपा कीजिये
मुझे बुद्धि निर्मल् सदा दीजिये

(जून, १८८३)

हिमालय

"उत्तर दिसि नगराज", अटल छवि सहित विराजत
लसत स्वेत सिर मुकुट, झलक हिम सोभा भ्राजत
वदन देस सविसेस, कनक आभा आभासत
अधोभाग की स्याम वरन छवि हृदय हुलासत
स्वेत पीत सँग स्याम धार अनुगत सम अन्तर
सोहत त्रिगुन, त्रिदेव, त्रिजग प्रतिभास निरन्तर
विलसत सो तिहुं काल त्रिविध सुठि रेख अनूपम
भारतवर्ष विशाल भाल भूषित त्रिपुंड्र सम !

उज्ज्वल ऊंचे सिखर दूर देसन लौं चमकत
परत भानु नव किरन प्रात सुवरन सम दमकत
लता पहुप बनराजि, सदा ऋतुराज सुहावत
हरी भरी डहडही वृच्छ माला मन भावत
कोकिल कीर कदम्ब, अम्ब चढ़ि गान सुनावत
स्यामा चारु सुगीत मधुर सुर पुनि पुनि गावत
कहुं हारीत कपोत कहूं मैना लखि परियत
कहुं कहुं खेचर वर चकोर के दरसन करियत
देवदार की डार कहूं लंगूर हिलावत
कहुं मर्कट कौ कटक वेग सों तरु तरु धावत
विकसित नित नव कुसुम तरुन तरु मुकुलित बौरत
अलबेले अलिवृन्द, कलिन के ढिग ढिग झौंरत

झरना जहं तहं झरत करत कल छर छर जल रव
पियत जीव सो अम्बु, अमृत उपमा हिम सम्भव
पवन सीत अति सुखद, बुझावत बहु विधि तापा
बादर दरसत, परसत, बरसत, आपहिं आपा !
गंगा गौमुख स्रवत, कहै को सोभा ताकी
बरनै जन्मस्थली, बहकि अथवा जमुना की
सतलज व्यास चिनाब प्रभृति पंजाब पंच जल
सरजू आदि अनेकन नदियन को निसरन थल
पृष्ठभाग रमनीक, रुचिर राजत रावन ह्रद
ग्रहन करत निज देह, सिन्धु अरु ब्रह्मपुत्र नद

हरिद्वार केदार बदरिकाश्रम की सोभा
लखि ऐसो को मनुज जासु मन कबहुं न लोभा ?
पुनि देखिय कसमीर देस नैपाल तराई
सिक्कम और भूटान राज्य आसाम लगाई

दच्छिन भुज अफगान राज मस्तक सों भेटत
बाम बाहु सों बरमा के कच भार समेटत
ज्यों समर्थ बलवान सुभावहिं सों उदार मन
देत अभय वर दान, मान युत निज आश्रित गन
आर्यावर्त्त पुनीत ललकि हिय भरि आलिंगत
गंगा जमुना अस्रु प्रेम प्रगटत हृदयंगत

रूरे रूरे गाम अधिक अन्तर सों सोहत
रूपवती, पर्वती, सती, जुवती मन मोहत

अगनित पर्वत खंड चहूं दिसि देत दिखाई
सिर परसत आकास, चरन पाताल छुआई
सोहत सुन्दर खेत पांति तर ऊपर छाई
मानहु बिधि पट हरित स्वर्ग सोपान बिछाई
गहरे गहरे गर्त, खड्ड दीरघ गहराई
शब्द करत ही घोर प्रतिध्वनि देय सुनाई
तहां निपट निश्शंक, वन्य पशु सुख सों विचरत
करत केलि कल्लोल, मुदित आनन्दित बिरहत
कहुं ईंधन कौ ढेर सिद्ध आवास जनावत
कहूं समाधिस्थित जोगी की गुहा सुहावत
विविध विलच्छन दृस्य, सृष्टि सुखमा सुख मंडल
नन्दन वन अनुरूप भूमि अभिनय रंगस्थल
प्रकृति परम चातुर्य, अनूपम अचरज आलय
श्रीधर दृग छकि रहत "अटल छवि" निरखि हिमालय

(अगस्त, १८८९)

भ्रमराष्टक

मंगलाचरण

मंगलमूल अमूल अनादि, अमध्य अनन्त अगोचर स्वामी। अच्छर, अर्थ, अनस्वर अस्वर, ईस्वर, आढ्य, असेस अगामी॥ उग्र अमोघ, अपार, अबोध्य, अलौकिक रूप, अनूप, अनामी। पावन कोटि अपावन के, प्रभु होउ सदा अलि के उर गामी॥

अथ अष्टक

जब बीति है राति प्रभात समै, रवि की किरनें तम कौं हरि हैं। खिलि हैं दल उत्पल के, तवही खुलि है मम बन्ध, कली झरि हैं॥ इमि सोचत हो अलि पंकज में समझ्यौ नहिं दैव कहा करि है। मद माते मतंग ने तोरयौ सनाल सरोरुह; षट्पद सो मरि है!

प्रिय जो अलि कानन चारी सदा, सुख वास विलास चह्यौ ही करै। मधु गन्ध पै ज़ो मतवारो रहै, रस पाग्यौ पराग लह्यौ ही करै॥ कल चम्पक चारु चमेलिन की, कुल केलि कला में रह्यौ ही करै। विधि के बस आय विदेस परयौ, नित झांखर चोट सह्यौ ही करै!

मान सरोवर के तट पै जब सीरौ सुमन्द समीर बहै हो। उज्जल सौ जल कौ तल, तापै कमोदन कौ कुनवा उलहै हो॥ उत्पल के दल छाए तहां, अति कोमल नाल

मृनाल डहै हो। ते दिन बीतिगए, अलि कौ कलियान सों प्रेम अलाप रहैं हो !

पंकज वृन्द विसैं परभात, सुहातौ सौ बात वहै मद सान्यौ। देख्यौ तहां नव उत्पल के ढिग, मातौ सौ भौंरा रह्यौ मड़रान्यौ ॥ जाय मृनालिनि पै जबहीं अलि व्यारि सों तासौं रहै बिलगान्यौ। राति कमोदिनि संग रम्यौ तिहि कोपि मनौ नलिनी अपमान्यौ !

ए आलि स्यामता तो में घनी, छबि सों कटि पै पट पीत विराजै। बाल लता बनवारी नई, तिनके ढिग तू छिन पै छिन भाजै ॥ प्यारी सी गुंज सों कुंजन में, बनवारी की बांसुरी की धुनि लाजै। स्याम भये व्रज वारिन कौ, द्रुम नारिन मांहि तू स्याम सौ राजै !

कटु केतिक काठ कठोर महा, तिन काटि अनेकन छेद करै। अवनी तल खोदत रंध्र कितेक, सुभावहि सों जदि काम परै ॥ नर कौ कर पर्स भएं निज अंग, भुजंग की भांति डसै, न डरै। सोइ भृंग मृनालिनि अंक फस्यौ, तजि सर्वस मूरखता सों मरै !

मालति मन्द सुगन्ध भई, मकरन्द पराग कौ लेस न पाइयै। त्यों नव पौधा गुलाबन के, तिन में सब कांटे हीं कांटे लखाइये ॥ बेला जुही की मुही भइ बन्द, गयन्द के गात न दान दिखाइयै। ओखौ समै अब आय पर्यौ अलि ये दिन धीरजता सों बिताइयै ॥

सूखे जरे बिरवा पुनिहूं, हरि जू के प्रताप सबै हरिऐ-हैं। मालती चारु चमेली, गुलाब की, सौरभ फेरि समीर समै हैं॥ ते नलिनी अरबिन्द के वृन्द, सरोवर बारि में सोभा सजै हैं। कीजै न सोच कछू अलि रावरे, बीतेदिना सुख के पुनि ऐ हैं॥

इस अष्टक में पहले और चौथे सवैये का आशय संस्कृत से लिया गया है। शेष कवि की उक्ति हैं॥

घनाष्टक

चूअत बारि की धार घनी, अति कारे से पैल, कपोल के ठौरी। कौंधत बीज़ु, मनौं मद बावरौ, खोलत मूंदत है दृग त्यौरी ॥ नाद करै, गरजै लरजै, बग पंगति दन्त दिखावत धौरी। मेह किधौं, मतवारौ मनोज कौ बारन, बन्धन तोरि भज्यौरी !

ग्रीसम ताप तपाएन की, छिन में सब भांति सों पीर हरी है। नीर समीर कों सीरौ बनाय, उसीर की चाहना, दूर करी है ॥ भेक की भीर गभीर नदी भई, बीर बहूटी सरीर धरी है। नीरद की नव बूंदन मांहि, खरो कछू जादूगरी सी भरी है !

ए घन स्यामता, तो में घनी, तन बिज़ु छटा कौ पितम्बर राजै। दादुर, मोर, पपीहा भई, अलबेली, मनोहर, बांसरी बाजै ॥ सौ बिधि सौं नवला अवला उर, आस, विलास, हुलास उपाजै। जो कछु स्याम कियौ ब्रज मंडल, सो सब तू भुअ मंडल साजै !

जीति निदाघ के देस नये, नित नीति की रीति सों मीत बनावै। प्रीति के अंकुर कों उपजाय, प्रतीत प्रजा उर आस बंधावै ॥ छोटे बड़ेन कौ भेद मिटाय के, पूरन न्याय दया दरसावै। बाढ़ौ सदा विजयी घन रावरौ, जौ लगि भानु प्रकासहि पावै ॥

ए घन ! तेरी बड़ी महिमा, उपमा जग मांहि कहूं नहिं पाई। पै परख्यौ बहु वार पयोधर, बानि परी है बुरी एक आई॥ दीन विचारी वियोगिनी बाल, तिन्हें प्रिय प्रान विहीन बनाई। धावत है उनमत्त भयौ जड़, गावत है जम द्वार बधाई !

रे घन ! कारौ भयौ किहि कारन, तू हम कौं यह बात बतावरे। कारन कौन झुकावत सीस, सोऊ पुनि भेद सबै समझावरे॥ रोवत क्यों घहराय कै धाय कै, क्यों अंसुआ टपकावत बावरे। क्यों तन तेरे में लागत आग है, लोहू लुहान परैं किमि घावरे ?

घातक है तू वियोगिन कौ, तिहि पातक कारौ सरीर भयौ है। मीचौ करै सोई देखि है नीचौ, सदा तिहि कारन सीस नयौ है॥ हिंसकता लखिकैं घन तेरी घनेरी, जबै विधि दंड दयौ है। ताही सों रोदन आदि करै, तन ताही सों लोहू लुहान छयौ है !

लोकन कौ उपकारी बड़ौ घन, नेक दया अपने उर लावरे। पैनी कृपान सी, काम के बान सी, बूंदें वियोगिन पै न गिरावरे॥ डंक बजाय निसंक, भयामिनि, दामिनि की न दमंक दिखावरे। पीतम अंक में जो न तिया, तिन कौं तनको न सतावरे रावरे !

(३१. ७. ८६)

श्रीहरिश्चन्द्राष्टक १

जय जय श्री हरि चन्द जयति भारत के प्यारे। जय जय भारत इन्दु जयति कविकुल उजियारे ॥ जय जय रसिक सुजान, सरस रसना रस नागर। जयजय बुद्धि विसाल, जयति कासिका उजागर ॥ जय अग्रवाल कुल कमल रवि, कविगन कुमुद निसाधि पति। जय श्री युत गिरिधर दास सुत, बुध समाज नुत विमल मति!

जय परहितपरबीन दीनदुखियन उपकारक। जय जय, आरज कुल गुन गन गौरव विस्तारक॥ जय जय, भारत मध्य प्रेम अंकुर उपजायौ। सुगम रीति सों प्रीति नीति मारग दरसायौ॥ जिय सों हूं प्रिय निज देस हित, किय अनेक उन्नति जतन। तन मन धन सरवस बारि जिन्ह, त्यों समाज सोधन सतन!

जय जय हरि पद कञ्ज मञ्जु मधुकर मतवारे। धर्म कर्म की धवल धुजा के रोपन हारे॥ जय जय, ब्रज बल्लभ बल्लभ बल्लभकुल बल्लभ। जय जाचक बलि कल्प, कल्प-पादप कलि दुर्लभ॥ जय प्रेम नेम मूरति विसद, सद सद्वस्तु विवेक रत। जय जयति स्वदेस सनेह धन, गुन निधान गुनिगन प्रनत!

१ सन् १८८८ ई० में इस अष्टक की १००० प्रति निज व्यय से मुद्रित करा के पं० श्रीधर पाठक ने बिना मूल्य वितरित की थीं—

जय मृत हिन्दी अमृत दान कर अमृत अंसुधर। जय जय रसिक चकोर चकित चित चोर चतुर वर॥ जय अनुराग सुहाग भरी नागरी नवल कृत। भारति पटल उघारि, अटल सम्पत्ति समाहृत॥ जय काव्य कला कौसल प्रभृति, नव्य नव्य जन मन हरन। कृत विविध विषय वेषा भरन, जय भाषा उन्नति करन!

जय हिन्दी मुख चन्द्रकला निश्शेष विकासन। "हरिश्चन्द्र चन्द्रिका," चन्द्रिका चारु प्रकासन॥ जय "कवि वचन सुधा" कर वसुधा सुलभ सुधाकर। जय चिर "चन्द्रावली", "सत्य हरि चन्द्र," रुचिर तर॥ जय हास्य वीर श्रृंगार करुना आदिक रस दरस कर। जय गद्य पद्य मय सुभग साहित्य सुगम मग मुकुर वर!

हरिश्चन्द्र सम सत्य सदा प्रति पालन कीनौ। गोपिन सरिस अनन्य भक्ति सर्वस रस भीनौ॥ टेक एक अल्हाद अटल प्रल्हाद प्रबल प्रन। ध्रुव सम ध्रुव विस्वास आस ध्रुव अवि अविचल मन॥ जय परम भक्त गन गनित पद, भनित भक्ति वैभव विमल। जय जक्त जाल सु विमुक्त सद भक्तमाल मुक्ता नवल!

हरि समान हरि कुमति निसा तम, सुमति प्रकासी। परम पुरातन प्रेम बैलि, नव कली विकासी॥ बचनावली मयूख चन्द सम आनँद दीनौ। सज्जन मन बनजाति, सुधा सञ्चारन कीनौ॥ नहिं यातें केवल इन्दुही, भारत

के तुम नित लसत। पै हरिश्चन्द्र! हरिचन्द गुन, सब तुम में एकत बसत !

जबलौं भारत भूमि मध्य, आरज कुल वासा। जबलौं आरज धर्म माहि आरज विस्वासा॥ जबलौं गुन आगरी नागरी, आरज बानी। जबलौं आरज बानी के, आरज अभिमानी॥ तबलौं यह तुम्हरौ नाम थिर, चिर जीवी रहि है अटल। नित चन्द सूर १ सँग सुमिरि हैं, हरिचन्दहु सज्जन सकल !

१ चन्द और सूरदास प्राचीन प्रसिद्ध कवि। पक्ष में चन्द्रमा और सूर्य।

घन विनय

सम्वत् छप्पन—सामन भादौं

हे घन ! किन देसन महं छाए, बरसा बीति गईं
फिरहु कहां भरमाए, का यह रीति नई ?

सामन परम सुहामन, पावस सोभा जोय
सो बिन तुम्हरे आमन, रह्यौ भयामन होय !
गयौ सलूनौ सूनौ, तुम बिन निपट उदास
दुख बाढ़ै दिन दूनौ, चहुं दिसि परि रह्यौ त्रास
सर वर सरित सुखानी, रज मय मलिन अकास
ऊबि अवनि अकुलानी, खग, मृग मरि रहे प्यास
कहं सब साज सजाए, करि रहे कहं घन घोर
दल बादल कहं छाए, जिहि लखि नाचत मोर
विकट भयंकर ग्रीसम, ऊसम, तपत प्रचण्ड
दहि रह्यौ दस दिसि भीसम, उत्कट अतिव उदण्ड
निर्दय सतत सतावत, तापत सो महि लोक
बिलपावत, कलपावत, सब जग परि रह्यौ सोक
तुम बिन कौन उबरि है, करि है तिन कर त्रान
हरिहै पीर, उधरिहै, हे जग जीवन प्रान
तुम अम्बुद, जग जीवन, जीवन नाम तुम्हार
चाहत तुअ पय पीवन, जीव नवीन उदार

करहु सफल निज नामहि, सब हित सहित सनेह
सरसावहु महि धामहि, वर बरसावहु मेह
भारत ह्वै रह्यौ आरत, धारत तुम्हरि हि आस
पुनि पुनि पेखि पुकारत, बेगि मिटावहु त्रास

भादों हूं अस बीती, बिन जल बिन्दु उदास
सूखी, रूखी, रीती, निर्धन सून्य अकास
पहरें उडुगन भूखन, जनमाठैं तिथि रैन
लखि लच्छन बहु दूखन, परजन मन बिन चैन
परत रहीं जल धारैं, नित जिन देसन ओर
सीतल मृदुल फुहारैं, तित रही झंझा सोर
जिहि व्रज मण्डल माहि रहि, नित नइ छवि अभिराम
सो पावन भुइं रहि सहि, बहु दुख, विधि भयें बाम
जहं अगाध जल दल दल, पुल बिन नहिं उतराव
तहं पैदलहि पथिक दल, चलि रहे बहु बिन नाव
भयौ कृश अंग जमुन जल, गंग तरग लटानि
जहं सर तहं ऊसर थल, सकलहि विधि पलटानि
दिन दिन दीन दुखित जन, दुख दारुन दुगुनात
द्रुत दुरभिच्छ कुलच्छन, छिन छिन अति अधिकात
जिहि पावस मृदु भुंइ महि, मचत हे कलित कलोल
सो पाहन सम ह्वै रहि, बुध भये अबुध, अबोल
कहुं कहुं कूपहु सूखे, हरे हरे झुरि गए रूख
एक तुम्हरे भयें रूखे, हमहिं सबहि भये रूख

द्वैपद, चौपद, बहुपद, खेचर, कुचर, मनूख
दबे अकाल काल रद, सहि रहे दारुन भूख
डोलत कोटिन प्रानी, इत उत लै कर प्रान
भए प्रानन के दानी, तुअ तन आनन आन!
हे घन! अबहु न चितवहु, इत बहु विपति निहारि
तुम सुख दिन कित बितवहु, हम कहं दुख महं डारि?

हे वारिद, नव जल धर! हे धाराधर नाम
हे पयोद पय सुन्दर, हे अतिसय अभिराम
हे पुष्कल वारांनिधि, हे जीमूत अपार
हे सुख सम्पादन विधि, हे सुखमा सुखसार
हे प्रानद आनंद घन, हे जग जीवन सार
हे सजीव जीवन धन, हे त्रिभुवनआधार
हे घन स्याम परम प्रिय, हे आनद घन स्याम
मुदित करन हरिजन हिय, हे हरि तनुज मुदाम
हे जग जीय जुड़ावन, भीय छुड़ावन हार
हे बकतीय उड़ावन, हीय बढ़ावन हार
हे रन बंक धनुस धर, सर तरकस जल धार
ग्रीसम विसम कलुस हर, रवि कर प्रखर प्रहार
हे सनेह सुख दायक, हे अगनित गुन खान
हे सौदामिनि नायक, हे हरितन उपमान
हे सर सरित प्रचारक, हे जलवाह अबाध
हे बहु व्याधि निवारक, हे सुख सिन्धु अगाध

हे गिरि तुंग सिखर चर, हे निर्भय नभयान
हे नित नूतन तन धर, हे पवमान विमान

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

हे गिरि तुंग सिखर चर, हे निर्भय नभयान
हे नित नूतन तन धर, हे पवमान विमान
हे भूतल हित कारन, पावन परम पुनीत
दुख दारिद अघ वारन, है मघवा मन मीत
हे युव जन मन मोहन, सोहन, सरस रसाल
रसिक रमन, रस दोहन, सुख पोहन, गुनमाल
हे कृश कृषिक कृपाकर, हे ऋषि कृत गुन गान
सुधा समुद वसुधा कर, हे महिमानमहान
तुअ गुन गन गरुआई, हे घन अतिहि अमान
अन गिन गुनियन गाई, रसना सकल सिरान
तुम भारत के धन, जन, गुन गौरव आधार
तुम ही तन, तुम ही मन, तुम प्रानन पतवार
सहि न सकहि सो तुम सन, तनकहु विसम वियोग
तुम बिन व्यथित विकल मन, अनु हूं नहिं सुख जोग
परम पुरातन तुम्हरौ, भारत सँग सत प्रेम
जिहि जानत जग सगरौ, मानत निहिचल नेम
सो तुम को नहिं चहियत, छांड़न हित सम्बन्ध
अटल सदैवहि कहियत, पूरन प्रकृति प्रबन्ध
तिन अनादि नैमन कौं, जिन बिसरावहु भाय
खोलहु निज नैनन कौं, बोलहु हित चित लाय
उचित न एकहु छिनकौ, अब अवलम्बन मौन
इन भारत वासिन कौं, तुम सन अन बन हौन
सोचहु सुमिरि सुजस निज, हे उज्वल जस भौन
इन दुखियनहि तुमहिं तज, घन ! अवलम्बन कौन

पठवहु परम सुहावनि, पावनि, पूरब पौन
सुभ सन्देस सुनावनि, जल भर लावनि जौन
स्याम घटा लै धावहु, छावहु नभहि दबाय
दिव्य छटा फैलावहु, लावहु दलहि सजाय
घोरहु घुमड़ि घमंकहु, घेरहु दसहु दिसान
दामिनि द्रुतहि दमंकहु, धारहु धनुस निसान
करखा कुपित गवावहु, जिहि सुनि हिय हरखाय
बरखा विपुल मचावहु, जिहि लखि जिय भरिजाय
गरजन गहन सुनावहु, रन ब्रत बीर समान
लरजन ललित दिखावहु, बांधहु धुर धुरवान
मुग्ध मयूर नचावहु, निज घन घोर सुनाय
दादुर भेक बुलावहु, नव अभिसेक कराय
कहुं कहुं कड़कि सुनावहु, विज्जु पतन ठनकार
कहुं मृदु श्रवन करावहु, झिल्लीगन झनकार
बन बन कीट पतंगन, घर घर तिय गन तान
पुरवहु रंग बिरंगन, हे बहु ढंग निधान
बीर बहूटिन के हित, हरि हरि घास बिछाउ
करहु नवेलिन के चित, रति रस केलि उछाउ
पोखर, नदी, तड़ागन, बागन, बगियन बीच
गैल, गली, घर, आंगन, भरहु, मचावहु कीच
कजरी मधुर मलारन की, धुनि पुनि सुनवाउ
मंगल मोद मनावन की, चरचा चलवाउ
झूलन फूल हिंडोलन, काम किलोल कराउ
पुनि पुनि पिय पिय बोलन, पपियन प्यास बुझाउ

करि कृत कृत्य किसानन, सम्वतसर सरसाउ
सींचि सस्य तृन धानन, तब निज धाम सिधाउ
समै समै पुनि आवहु, पुनि जावहु इहि रीति
सहज सुभाग बढ़ावहु, गहि मग प्राकृत नीति
प्रथित प्रेम रस पागहु, पूरन प्रनय प्रतीत
सदा सरस अनुरागहु, हे घन विनय विनीत
(१६. १२. ९९)

जगत सचाई सार

समर्पण

हे संसार सार सर्वस्व !

क्या तेरी वस्तु असार कही जा सक्ती है? माना जगत केवल एक कौतुक मात्र है, पर है तो तेरा ही न ? ऐसा क्या है जो तेरा नहीं या जिसमें तू नहीं ? तो फिर उस्से हम क्यों भागें ? और भागें तो जायँ कहां ? जब सब ठौर तेरा ही सहारा है, तो हमारा भी सब ठौर गुज़ारा है-तू अपनों की बांह गहता है इसी से हमें सदा तेरा भरोसा रहता है। हे परम प्रिय परात्पर ! हे प्रेम वारिद ! हे संसार सार ! हे विश्वाधार ! हे जगत मित्र ! यह तेरे चरित्रों से पवित्र जगत की सचाई का चित्र तेरे जगत को समर्पित है-"त्वदीयम्वस्तु गोविन्द" त्वदीयेभ्यः प्रदीयते।

लखनऊ,
२० अप्रैल बुध, १८८७

त्वदीय
श्री—

जगत सचाई सार

कहो न प्यारे मुझ से ऐसा—"झूठा है यह सब संसार
"थोथा झगड़ा, जी का रगड़ा, केवल दुखका हेतु अपार"
माना हमने वस्तु जगत की नाशवान हैं निस्सन्देह
फिर भी तो छोड़ा नहिं जाता, पलभर को भी उनसे नेह
लगा हुआ है वस्तु मात्र का एक दूसरे से सम्बन्ध
दूषित क्योंकर हो सक्ता है उस कर्त्ताका अटल प्रबन्ध ?
जगत है सच्चा, तनक न कच्चा, समझो बच्चा इसका भेद
पीओ खाओ, सब सुख पाओ, कभी न लाओ मनमें खेद
"मिट्टी उढ़ौना, मिट्टी बिछौना" मिट्टी दाना पानी है
मिट्टी ही तन बदन हमारा, सो सब ठीक कहानी है
पर जो उलटा समझ के इसको, बने आपही ज्ञानी है
मिट्टी करता है जीवन को, और बड़ा अज्ञानी है
मिट्टी क्या है सोचो तो टुक अक़ल लड़ाके प्यारे मित्र
पञ्च महा भूतों में धसके, देखो इसकी बात विचित्र
परम पवित्र पावनी पृथ्वी, भरी सकल सुघराई से
पद पद पर शोभा से छाई, ईश्वर की चतुराई से
अति अमोल रत्नों की जननी, सब द्रव्यों की माता है
सदा सुधा रस भरी, खरी, यह सब प्रकार सुख दाता है
सब जीवों की भौतिक काया इससे पोषण पाती है
जीव से नाता छुट जाने पर इसीमें वह मिल जाती है
तुमसे, पृथ्वी से, मिट्टी से, है बस इतना ही सम्बन्ध
काम तुम्हारे आती है वह, सुन्दर यह प्राकृतिक निबन्ध

समझ के सारे जगत को मिट्टी, मिट्टी जो कि रमाता है
मिट्टी करके सर्वस अपना, मिट्टी में मिल जाता है
कभी नहीं ऐसा मूरख नर सार सृष्टि का पाता है
जैसा ही आया था जगमें वैसाही वह जाता है
इस शरीर से जो मनुष्य नहिं कुछ भी लाभ उठाता है
उस्से तो वह पशू भला जो काम सैकड़ों आता है
उस्का जन्म व्यर्थ है जो नर पौरुष कुछ न दिखाता है
न इसलोक, ना उसी लोक में हाथ उसे कुछ आता है
ऐसा कायर तो पृथ्वी को वृथा भार पहुंचाता है
अपना जीना ही जिस्को एक बड़ा बोझ हो जाता है

जो तन मन से करता है श्रम, उचित रीति से चलता है
सारी वसुधा का क्रम क्रम से, सर्वस उस्को मिलता है
हाथ, पैर और नाक, कान, बुद्धि से काम जो लेता है
जीवन का सुख पाता है वह, औरोंको सुख देता है
पुत्र, कलत्र, मित्र, बान्धव में फैला कर सच्चा आनन्द
काम जगत का करता है वह, रहता है सुख से स्वच्छन्द
दुख कब ऐसे पुरुष सिंह के पास फटकने पाता है
वह तो आलस का साथी है, आलसियों पर जाता है
जब तक तुम इस जगमें सच्ची धर्म रीति पर चलते हो
तब तक निस्सन्देह निरन्तर सब बातों में फलते हो
सारा सांसारिक सुख पाकर ईश्वर को पहिचानौ हौ
उस्की विद्यमानता, सत्ता, वस्तु मात्र में जानौ हौ
रचा उसी का है जब यह जग निश्चय उस्को प्यारा है
इसमें दोष लगाना अपने लिये दोष का द्वारा है

मनु वसन्त अनुहार, हसत बन्य स्थली
रहंट परोहे चलहिं, प्रसन्न किसान हैं
गिर्री सुर श्रुति सुखद, सुरव कृषितान हैं
छिन छिन छीजत दिवस, बढ़त निसि वैस है
नित नित गिरत तुसार, ब्यारि सीरी बहै
दीसत हिम विस्तार, हिमाचल सीस है
उठि आयौ कैलास सहित, जनु ईस है
सरिता सर अवगाहन, मन भय भीत है
कपत गात सकुचात, लगत अति सीत है
प्यारी लागत घाम, छांह सुख हीन है
ऊषम गुन अधिकार, अग्नि आधीन है
प्रेमिन मन अधिकात, अतिव अभिलास है
प्यारिन सँग स्वच्छन्द, सुरति सुख आस है
सेवहिं सुखित इकन्त, कन्त कुल कामिनी
दम्पति प्रनय पुनीत, रीति अनुगामिनी
खान पान आनन्द, अमीरस ऐन है
विरच्यौ विधि हेमन्त विविध सुख दैन है

(९. १. १९००)

वसन्तागमन १

विगत शिशिर ऋतु लगत अब भू छवि सब विधि भिन्न
झरत पात महकत विटप ऋतु वसन्त वर चिन्न
शिशिर निठुर बल करि लिये तरवर अभरन छीन
तुरत वसन भूखन दिये तिन्ह ऋतुराज नवीन
राज सरिस उपकार लहि भये मुदित मन वृच्छ
चरचा करि वन जाति महं, गुन मान्यौ प्रत्यच्छ
किये वनस्पति गन तबै भूखन नव परिधान
सजी सबिधि सिंगार सब, नव सुन्दरी समान
ह्वै इकत्र सोइ विपिन महं, अति मन मगन प्रमोद
करहिं गान ऋतुराज गुन, रव द्विज वृन्द बिनोद

वसन्त राज्य १

नृप वसन्त के राज में काहि होतु सुख नाहिं
जहां जरे जंगल, कुथल, उपवन सम ह्वै जाहिं
जहं ऊसर पटपर हु में पहुप अवालि बिछि जायं
कोटि कोस परजन्त सुठि ते अनन्त दरसायं
उदित भानु किरनन परसि विकसित इक सँग होंहिं
दिन भरि लघु आकार के स्वेत विन्दु सम सोंहि

१ मार्च और अप्रैल सन् १८८१ में लिखित। १९ जनवरी, सन् १९०० में संशोधित।

मन्द मन्द सूरज तपत, दिपत जलज की जोति
ज्यों ज्यों दिन आवत अधिक, अधिक कान्ति तिहि होति
हरित घास सोभित धरनि, विसद जलासय स्वच्छ
नव वसन्त सम्पति भरे, झुकत झालरे वृच्छ
ठौर ठौर कुसुमावली भूषित भूरुह पांति
मन मोहत, सोहत सरस, दृग जोहत बहु भांति
लता कुञ्ज द्रुम पुञ्ज घन सघन विपिन अलि वृन्द
मद साने भौंरत फिरत, विचरत मुदित गयन्द
कराहिं केलि कूजहिं सुरव तर वर रमन विहंग
विकसित ह्वै वन जाति सब उपजावति मद अंग
जित जित चित चाहत चलन, तित तित यह बरताव
दीसत पद पद पर परम पावन प्रकृति प्रभाव

आम सलोने विटप की सघन डहडही डार
लदी स्वर्न सम बौर सौं मन जनमावति मार १
सर रसाल नव मंजरी भ्रमरावलि गुन धारि
रति प्रसंग प्रिय जन हनन, स्मर २ धनु लियौ सम्हारि
भ्रमर कुसुम बिच बैठिकैं रस पराग सुख पोहि
भ्रमरी के मुख मुख धरै मनु तिहि चुम्बन लेहि
ललित बेलि लहराति नव, पवन प्रेरना पाय
विहराति अलबेली लता, विटपन उर लिपटाय
पवन जु पहुप पराग मिलि, मिलत पथिक हिय आय
प्रिया परस सुधि लाय मन, विकल करत अति ताय

---

१ मार = काम देव २ स्मर = काम देव।

अनल सरिस चमकत अहो ये पलास नव फूल
दाहक गुन बिन हूं दहत पथिकन है प्रति कूल
पथिक विरह हत हृदय कहुं बस्यौ आम की छांह
गिरे बौर नव कन, बढ़्यौ मदन दाह तन मांह
पवन हिलावत मृदुल जब कुसुमित साखा आम
मनु पथिकन के मन मथन मंत्र पढ़तु है काम

दिवस रम्य निसि रम्य तर, जन मन मगन प्रसन्न
समय सुभग ऋतुराज कौ सकल सौख्य सम्पन्न
है सकाम नव वाम बहु कराहिं प्रेम बलिहार
विलसहिं मद आनँद सनी बनि बनि पिय गल हार
कर्न झूमिका पहुप मय मांग गुथी कुसुमाल
बेनी फूलन की अवलि गल प्रसून सुठि माल
कुचन विहारी हार उर नाभि चारिनी माल
कंठ किलोलें करि रह्यो गुथ्यौ फूल गुच्छाल
बाहु लता भुजबन्द जुग सुमन स्वेत कर बन्ध
पुनि कंकन पहुंची सजी अलंकार अनुबन्ध
पहुप गेंद कर में लिये बहुरि उछारति बाल
कुसुम सेज सजवाय पिय सयन हेत रति काल

हेमन्त

बीता कातिक मास शरद का अन्त है
लगा सकल सुख दायक ऋतु हेमन्त है
ज्वार बाजरा आदि कभी के कटगये
खल्यान के काम से किसान निबटगये
थोड़े दिन को बैल परिश्रम से थमे
रब्बी के लहलहे नये अंकुर जमे
ज़मींदार को मिली उगाही खेत की
मूल व्याज सब दैन महाजन की चुकी
खाने भर को जिस किसान को बच रहा
उसके घर आनन्द हर्ष सुख मच रहा
जिन को कुछ नहि बचा, करम को टो रहे
क़िस्मत को दे दोष बैठ घर रो रहे
ख़रीफ़ के खेतों में अब सुन सान है
रब्बी के ऊपर किसान का ध्यान है
जहां तहां पर रहँट परोहे चल रहे
बरहे जल के चारों ओर निकल रहे
जौ गेहूं के खेत सरस सरसों घनी
दिन दिन बढ़ने लगी विपुल सोभा सनी
सुघर सौंफ सुन्दर कसूम की क्यारियां
सोआ, पालक, आदि विविध तरकारियां

अपने अपने ठौर सभी ये सोहते
सुन्दर सोभा से सब का मन मोहते
बढ़ा कातिकी चीज़ों का व्यौपार है
रूई का रुज़गार गरम बाज़ार है
दिन दिन सरदी बढ़ै, धूप की चाह है,
ग़रीब गुरबा का जिस्से निर्वाह है
रात बड़ी और दिन छोटे होने लगे
बन्द गरम कोठों में सब सोने लगे
लोगों के कपड़ों का बदला रंग है
तरह तरह का काट निराला ढंग है
सौड़, रज़ाई, फ़र्द, गलेफ़, लिहाफ़ है
गलेबन्द, अस्मामा, लुंगी साफ़ है
शाल, दुशालों का होता बर्ताव है
नये नये वस्त्रों का सब को चाव है
चपकन, ओवरकोट, कोट, पतलून है
फ़ेशन पर लगरही हर जगह दून है
गली गली आग़ा अफ़ग़ानी डोलते
मेवा औ हींग से तरज़ू तोलते
लगे पारसी तथा सरकसी आवने
बड़े बड़े शहरों में खेल मचावने
चारों ओर विवाह आदि की धूम है
रात रात भर चढ़ें बरात, हुजूम है
नव जोवन वालों पर आया रंग है
अंग अंग में भरी अनंग उमंग है

बालाओंको पिया मिलन की चाह है
गले लिपट कर सोने का उत्साह है
सुखी सुहागिन करें कन्त सँग केलियां
जीवन की सुख सुधा पियें अलबेलियां
दुखी बाल विधवाओं की जो है गती
कौन सके बतला किसकी इतनी मती
जिन्हें जगत की सब बातों से आन है
दुख, सुख, मरना, जीना एक समान है
जिनको जीते जी दी गयी तिलाञ्जली
उन्की कुछ हो दशा किसी को क्या पड़ी
लगा दिसम्बर मास, बड़ा दिन पास है
आपहुंचा त्यौहार निकट "क्रिस्मास" है
बाज़ारों में मची, बड़ी एक धूम है
सभी तरफ़ को छाया हुआ हुजूम है
साहब लोगों के घर जाती डालियां
फल मेवा से भरीं खचाखच थालियां
ईसाई गन फिरें मगन, मन मोद में
सुख से समय बिताय्रें, विविध विनोद में
करें घरों में उत्सवकी तैयारियां
बना बना कर सुन्दर बन्दन वारियां
फूल माल के जाल अनूठी चाल के
ललित पताका पंक्ति रचें रँग लाल के
भांति भांति के नाच रंग बहु ढंग के
कर कर करें कलोल उमंग उमंग के

आश्रम बद्री नाथ बन्द जाना हुआ
पहाड़ पर से उतर तले आना हुआ
शिमला, नैनीताल, आदि रीते हुए
"हिल सीज़न्" के मास गये बीते हुए
अफ़सर लोगों के दौरे होने लगे
भाग ऊंट और छकड़े वालों के जगे
पड़ने लगा तुषार, बरफ़ गिरने लगी
अद्भुत शोभा के कौतुक करने लगी
इस्की शोभा को जो देखा चाहिये
चले हिमालय के पर्वतमें जाइये
घर दर दीवारों पर, वन के पेड़ पर
खेतों, बाग़ों में, औ उन्की मेंड़ पर
जम कर धरती वहां अनेकों आकृती
दृश्य बनाती विविध विलक्षण प्राकृती
ह्वां से उत्तर ओर दृष्टि जो कीजिये
अकथनीय छवि अवलोकन सुख लीजिये
स्वच्छ स्वेत हिमयुक्त हिमाचल चोटियां
रजत मयी कैलास शिखर की जोटियां
चमक रहीं चहुं ओर अतुल छवि छाजतीं
भारत सुजस समूह समान विराजतीं
विस्तृत जो बहु दूर धवल पर्वत थली
मानो भारत भाल भस्म उज्ज्वल मली
अथवा मुनि जन पुण्य पुञ्ज की ये निधी
धर्म कर्म की रहे जहां रक्षित विधी

ध्यान लगा के जो देखो तुम सृष्टी की सुघराई को
बात बात में पाओगे उस ईश्वर की चतुराई को
ये सब भांति भांति के पक्षी ये सब रंग रंग के फूल
ये बनकी लहलही लता नव ललित ललित शोभाकी मूल
ये नदियां, ये झील सरोवर, कमलों पर भौंरों की गुञ्ज
बड़े सुरीले बोलों से अनमोल घनी वृक्षों की कुञ्ज
ये पर्वत की रम्य शिखा और शोभा सहित चढ़ाव उतार
निर्मल जल के सोते झरने, सीमा रहित महा विस्तार
छै प्रकार की ऋतु का होना नित नवीन शोभा के संग
पाकर काल वनस्पति फलना, रूप बदलना रंग विरंग
चांद सूर्य की शोभा अद्भुत, बारी से आना दिन रात
त्यों अनन्त तारा मण्डल से सज जाना रजनी का गात
यह समुद्र का पृथ्वी तल पर छाया जो जलमय विस्तार
उस्में से मेघों के मंडल हों अनन्त उत्पन्न अपार
लर्जन गर्जन घन मण्डल की बिजली वर्षा का सञ्चार
जिस्में दीखे परमेश्वर की लीला अद्भुत अपरम्पार
उस कारीगर ने कैसा यह सुन्दर चित्र बनाया है
कहीं पै जलमय कहीं रेतमय, "कहीं धूप कहीं छाया है"
विविध रूप का अनोखा अचरज जिस्के बीच समाया है
कोई कहता "क़ुदरत" जिस्को कोई कहता "माया" है
पांच बजे तड़के उठके जिस दम हम न्हाते धोते हैं
आधी रात होने से उस दम लण्डन वाले सोते हैं!
यहां जिन दिनों गर्मी से सब के घर पंखे चलते हैं
आस्ट्रेल्या वालों के घर में गरम कोयले जलते हैं!

इसप्रकार के दृश्य अनेकों दृष्टि नित्य जब आते हैं
अचरज युक्त अनूपम अनुभव वे मनमें उपजाते हैं
इन सब के कारण से होता नहीं है किस्के मनको सुख
भला किसी को बताइये तो पहुंचा है इनसे कुछ दुख
सब स्वभाव के मनुष्य जिन्की सदा प्रशंसा गाते हैं
जोगी, जती, विरक्त, उदासी भी उत्तम बतलाते हैं
जो नेत्रों से दिखाई देता, कानों से सुन पड़ता है
जिस्को चित्त ग्रहण करता है जिस्से कुछ न बिगड़ता है
सत्पुरुषों ने जिस्को बारम्बार पुकारा अच्छा है
जो वो ही नहिं सच्चा है तो भला और क्या सच्चा है ?
जिस्का यह सब रचा हुआ है, वह परमेश्वर सच्चा है
जगत के सच्चे होने का मत क्यों करके तब कच्चा है ?
जो सच्चा है, वह प्यारा है, वही सकल सुख का भंडार
वही मनुष्यों के जीवन को देता है आनन्द अपार
जगत को झूठा झूठा कहके करो नहीं उस्का अपमान
बुद्धि को अपने काम में लाओ, हे मनुष्य हे बुद्धि निधान
जिस्को तुम जानो यह दुख है सहो उसे धीरज के साथ
दुख में सुख का अनुभव करना है मनुष्य को अपने हाथ
दुख तो मनुष्य के जीवन की एक कसौटी है मानो
इसमें जैसा रहे रंग, वैसाही भाव उस्का जानो
काम क्रोध और लोभ मोह भी जीवन के सहयोगी हैं
इन्के वश में जो पड़ता है उसी के ये प्रतियोगी हैं
इन्को जो अपने मन से जड़ मूल मिटाना चाहे हैं
वे असमर्थ कभी न जगत का सत उद्देश्य निवाहे हैं

जैसा यह जग बना हुआ है वैसा इसको पहचानो
ईश्वर की व्यापकता इसमें सभी ठौर प्यारे जानो
देख देख उसकी महिमा, गुण निशिवासर उसके गाओ
अर्थ धर्म और काम मोक्ष पाने में पौरुष दिखलाओ
रूप जगत का यथार्थ देखो, पड़ो भूल में कभी न तुम
जीवन के कर्त्तव्य निबाहो, समझ के उसके शुद्ध नियम
चलोगे सच्चे मन से जो तुम निर्मल नियमों के अनुसार
तो अवश्य प्यारे जानोगे सारा जगत सचाई सार

सरद समागत स्वागत

अहो ! सरस दरसात, सरद ऋतु आवनि
सुन्दर परम सुहावनि, सब मन भावनि
सोहत विसद अकास, कास बन फूले
खग मृग सोभा निरखि, मगन मन भूले
लसत सरोवर कुमुद, सरित भई दूबरि
उज्ज्वल जल अवगाह, सुखद सुरसरि सरि
विकसित कुसुम द्रुमालि, चहूँ दिसि सोभहिं
अद्भुतआभा निरखि, देव गन लोभहिं
मृदुल सुमन्द समीर, सकल थल आवहि
छिन छिन मदन तरङ्ग, अंग उर लावहि
बारिद गन बिलगाय, गये निज देसहि
उडुगन उदित उजास, अकास असेसहि
बिमल मयङ्क मयूख, अमिय बरसावहि

सतगुन समुद सुहास, समुद सरसावहि
बन बन भौंरत भौंर, छके मद सनि सनि
सारस सुआ मराल, विहरि रहे, बनि ठनि
दल फल जल सुठि स्वाद, सस्य तृन नव नव
खेतन खेचर भीर, चहकि रहीं कलरव
विविध विहंगम गान, प्रकृत धुनि सुनि सुनि
नव युव जन मन उमगत, रस लहि पुनि पुनि
जल थल धरनि अकास, छई अब जो छवि
सो सब अकथ अपार, सकहि कहि को कवि
ऋतुवर ! सरद सुहावनि, स्वागत स्वागत !
तुअ हित मम हिय रह्यौ बहुरि अनुरागत

(७—९—९९)

गुनवन्त हेमन्त

सरदी कौ अधिकार, सरद कौ अन्त है
आयौ बहु गुनवन्त, सुऋतु हेमन्त है
नव गेंहूँ जव खेत, हरित छवि सोहनी
सरसों सरस सुहात, दरस मन मोहनी
सुघर सौंफ, सुन्दर कसूम क्यारी घनी
उलहि रहीं रमनीक, नीक सोभा सनी
मूरी, मटर, मलूक, फूल कोमल कलीं
सरस साग सुठि स्वाद, मृदुल मीठी फलीं
बरन बरन कृषि धरनि, लसत कुसुमावली

किम्वा उज्ज्वल ज्योति विमल मोती जड़ीं
हैं ये नृप हेमन्त चरण चौकी पड़ीं
अहो धन्य हेमन्त अनोखे बहुगुनी
ऋतुओं के सरदार बड़े बांके धनी
तेरी शोभा सुघर कहां लों गाइये
करनी शुभ करतूत अनेक सुनाइये
ख्यात जगत में ऋतु वसन्त "ऋतुराज" है
किन्तु नहीं, तूही सबका सरताज है
जो सुख जो उपकार जगत में तू करै
उस्का आधा भी औरों से ना सरै
हो तू सब को सुखद सकल संसार में
सुख पूरित अद्भुत अचरज आगार में
जिस्से मिलकर इस जीवन व्यापार में
वर्तें मनुज समाज परस्पर प्यार में

(१८८७)

शरद ऋतु वर्णन

(कालिदास के ऋतुसंहार से)

कांस के फूल दुकूल, खिले अरविन्दन में मुख सुन्दरताई। बोलन मत्त मरालन की कल नूपुर केरि करै समताई॥ सोहत धान पकेन की पांति सोई पतरे तन की सुघराई। या विधि रूप सिंगार किये ऋतु सर्द नई दुलही सम आई॥

कांसन सों धरनी कौ सरीर निसा नव निर्मल चन्द कलान सों। हंसन सों नदियांन कौ नीर तड़ाग कमोदन के कुनवान सों॥ कानन के तट फूलन भार झुके १ छद सप्तन के बिरवान सों। सेत भए सब या ऋतु के गुन बाग चमेलिन की कलियान सों॥

चञ्चल जो सफरी फरकैं मनु मञ्जुलसी कटि किंकिनि डोरी। सेत विहंगन की सुठि पंगति, राजतिसुन्दर हार सी गोरी॥ तीर के देस विशाल नितम्ब सुमन्द प्रवाह भई गति थोरी। सोहाति या ऋतुमें सरिता, गजगामिनि कामिनि सी रस बोरी॥

चांदी के पत्रन के सम ऊजरे, संख मृनाल से सु-

१ सप्तच्छद वा सप्तपर्ण जिसे भाषा में कहीं २ सतबन्ना कहते हैं।

न्दर धौरे। वायु के वेग फिरैं बदरा छितराने अनन्त इतै उत दौरे॥ अम्बु घटेतैं भए हलुके तितरैं वितरैं न रहैं इक ठौरे। राजत राज समान अकास, मनौं तिहि मस्तक चौर हैं ढौरे॥

पीसे भए सुरमा के समूह की सोभा सनौ सुठि अम्बर छायौ। भूमि पै फूल बँधूकन के खिलिबे सों रच्यौ रँग लाल सुहायौ॥ खेतन में तिमि धानन की सुघराई कौ रूप छयौ मन भायौ। कौन युवा न इन्हें लखिकें हुइ है उत्कंठित काम सतायौ॥

मन्द समीर चले सों चलैं अति चञ्चल चारु अगार की डारी। फूलन की अधिकाई के भार भई सुकुमार प्रवाल अगारी॥ चूइ रह्यौ रस पीवति हैं छकि पंगति भौरन की मदवारी। कौन के चित्त में ना चुभि है नव जोवन रंग भरी कचनारी॥

तारे खिले अति नीके अकास, सोई वर भूषन अङ्ग सजाई। मेघ की रोक सों मुक्त भए मुख चन्द की ज्योति अनूप निकाई॥ चाँदनी चारु खरी छिटकी सोइ स्वच्छ दुकूलन की सुघराई। यों नव बाल सी ये रतियां नित बाढ़न लागीं नई छविपाई॥

बतकें निज आनन गाड़ि तरंगन की अवलीन डुलावति हैं। कल हंस रु सारस की सुठि पंगति तीर पै भीर मचावति हैं॥ रज छाई सरोजन की, अरुनाई सों

ताकी निकाई बढ़ावति हैं । पुनि शब्द मरालन के सों तरंगिनि प्रीति हिये उपजावति हैं ॥

नैनन कों अति उच्छव दैन, मयूखन सों हिय हारन हारी । मोद उमङ्ग बढ़ावन, सीतल वारि फुहार कौ झारन वारी ॥ पीय बिछोह बुझे विष बानन सों जिन कौ हिय होय विदारी । ऐसी तियान के अङ्ग कों चन्द भयौ अति ताप सों जारन हारी ॥

फल भार नये नव धानन के बिरवान कों हौलें हिलावत है । गए फूलन सों झुकि पादप जो तिन बारहिं बार नचावत है ॥ विकसे भए पङ्कज वारि विषैं, तिन में नलिनी कों कँपावत है । सोई सारद वायु अतीव युवा जन के मन कों बिचलावत है ॥

मदमाती, विलास की चाह भरी, जहां जोड़ी मरालन की बिहरें । सुठि स्वच्छ सरोज खिले दल उत्पल की अलबेली छटा छहरें ॥ मृदु मन्द प्रभात के बात सों लोल, उठें औ मिटें जल की लहरें । इमि सोभा भरे सुथरे सर आज, उमङ्ग भरें हिय में ठहरें ॥

नष्ट भयौ अब इन्द्र कौ चाप, छिप्यौ बदरान के गर्भ मझारी । त्यों चमकै न अकास धुजा, चपला चमकीली छटा छबि वारी ॥ पांख की पौन सों त्यों न धुनै, नभ कों बगलीन की पांति पियारी । उन्नत आनन सों न विलोकत व्योम कों आज मयूर सुखारी ॥

नाच की वानि तजी, इहि हेतु मयूरन कौ सतसङ्ग विहाई। मञ्जुल मिष्ठ गवैया मरालन सङ्ग अनङ्ग ने कीनी मिताई॥ अर्जुन, नीप, कदम्ब के पादप, साल तथा कुटजादि सों धाई। फूलन के लगिवे की निकाई सबै छद सप्तन मांहि समाई॥

निवारी के फूलन की महकानि मलूक मनोहर सौंधी सुहाय। बिराजैं विहङ्ग अलापैं निचिन्त रही किलकार प्रतिध्वनि छाय॥ किनारे की ओर मृगीन के नैन करैं वर उत्पल की समताय। लसैं इमि बाग भरे अनुराग, लखैं तिहि लोग हिये हरखाय॥

अरविन्द कल्हार कमोदन कों छिन पै छिन छूय डुलावत है। तिन के सँग सों अति सीतलता को सनेह भरौ गुन पावत है॥ बन पातिन कोर लग्यौ हिम कौ जल, चञ्चल वाहि बनावत है। इमि प्रात कौ बात अनेकन भांति उमङ्ग हिये उपजावत है॥

पूरे पके नव धान के ढेरन सों कहुं भूतल सुन्दर छायौ। त्यों सुचिताई सों बैठी अनेकन गौअन कौ सुठि झुण्ड सुहायौ॥ सारस वृन्द के सङ्ग कहूं कल हंस के गान कौ शब्द सुनायौ। दूसरी सीमन ने इमि लोगन के मन मांहि प्रमोद जनायौ॥

हंसन ने गति मन्द, खिले अरविन्दन ने मुख चन्द निकाई। नीले प्रफुल्लित उत्पल ने मद भीनी विलोकनि

की ललिताई ॥ पातरी चारु तरङ्गन ने भृकुटी की विलास भरी कुटिलाई। जीति लई ललनान की आज है सोभा समाज अनूपमताई ॥

फूलन भार सों डार झुकीं, मृदु स्यामा लता अति लागत प्यारी। नारिन की गहनेन सों सोभित बांहन की छबि हारनहारी ॥ त्योंही असोक के फूलन के सँग सोहि रही नव मालति क्यारी। दन्त विभा सों लसी मुसिक्यान की चन्द उजास चुरावन हारी ॥

कारे घने अति कुञ्चित केसन की अलकैं बिथुरावती हैं। तिन में नव जोवनधारी तिया नव मालति मांग भरावती हैं ॥ विलसैं द्युति कञ्चन कुण्डल चारु बड़ी जिनसों छवि पावती हैं। बहु भांति के नीले सरोजन कों तिन कानन में पहरावती हैं ॥

चन्दन के रस भीने हरा कुच मण्डल में पहरावती हैं। पुनि पीन पयोधर के तट पै लर कौंधनी की लरकावती हैं ॥ कल पायल पायन में पहरें, झनकारत कामजगावती हैं। मन मांहि प्रमोद भरी वनिता, नव जोवन साज सजावती हैं ॥

विकसे कमोदन सों छाई, मन भाई, जहां राजहंस राजैं, छवि हिय हरसावनी। पन्ना के रङ्ग स्वच्छ सुन्दर भरयौ है अम्बु ऐसी ठौर ठौर दीसैं डहरैं सुहावनी ॥ धारन करत सोभा तिनकी सलौनी अति, उज्ज्वल अ-

कास आज मन ललचावनी। बादर पलाने चन्दतारे छहराने या में सुखमा समूह सबै सुख सरसावनी॥

कुमुद सङ्ग सों सीत सुभग सुठि बहति बयारी। जलद जाल सों छुटी दिसा दीसति अति प्यारी॥ मैल गयौ बिलगाय निपट उज्ज्वल जल सोहत। शुष्क भई सब पङ्क स्वच्छ धरनी मन मोहत॥ तिमि विमल किरन चय चन्द की चारु चांदनी जगमगत। उडुगन विचित्र चित्रित रुचिर, सरद व्योम सुन्दर लगत॥

दिनकर किरनन कों परसि विकसत कञ्ज प्रभात।
सुन्दरीन के वदन सम सो सुन्दर दरसात॥
त्यों छिपिगऐं मयङ्क के खिले कुमुद मुदि जात।
जिमि पर देस गऐं पिया तिय मुख छवि कुम्हिलात॥

नैन स्याम सोभा सुभग नील कमल में देखि।
कनक कौंधनी की झनक मत्त हंस रव पेखि॥
प्रानप्रिया की अधर छवि बन्धुजीव में पाय।
पथिक आज भ्रम में पर्‌यो रोवत अति अकुलाय॥

सस अङ्क निकाई नई वनितान के उज्ज्वल आनन मांहि बिहाई। कल हंस की बोलन प्यारी खरी मनि नूपुर बाजन में पधराई॥ अरुनाई बँधूक के फूलन की अबलान के ओठन कों पहराई। सरदागम सोभा सलौनी सबै अति मञ्जुल औरहि ठौर सिधाई॥

फूले कमल सोइ वदन, उत्पल नील नैन सुहावहीं
नव स्वेत कास अकास सोई वर वसन दुति दरसावहीं
पुनि रुचिर कुमुद मलूक छवि कमनीय काम जगावहीं
इमि सरद कामिनि सरिस तुम्हरे हृदय प्रीति बढ़ावहीं

(सितम्बर, अक्तूबर १८८९)

भारत प्रशंसा

जय जय भारत विशाल, झलकत हिम कीट भाल
बुधिबल दृग ज्वलित ज्वाल, तेज पुञ्ज धारी।
सर धनु वर खरग धार, आयुध खल दल प्रहार
दनुज कुल विदार, मनुज गन अनन्द कारी।
विद्या पीयूष खान, बुध जन नित करत पान,
त्रिभुवन अमृताय मान करन ताप हारी।
गिरिवर भ्रूभंग धारि, गंग धार कंठ हार
सुर पुर अनुहार, विश्व वाटिका विहारी।
उपवन बन बीथि जाल, सुन्दर सोइ पट दुसाल
कालिमाल विभ्रमाऽलि मालिकाऽ लकाऽ ली। १
अद्भुत आनन्द कन्द, सोभा लखि लजत चन्द
चन्द तें दुचन्द चारु हसनि प्यारि प्यारी।
सत्य धर्म कर्म निष्ठ, धीर वीर वर वरिष्ठ
सौम्यता विशिष्ट, शिष्ट सादर सत कारी।
उन्नत मन अति उदार, साधन धन सिद्धि द्वार
जतन रतन निधि अपार, दीन दीनताऽरी। २

---

१. यह संस्कृत पद लालित्य के कारण संनिवेशित करदिया गया है। अर्थ—काले रंग के भौरों की जो पङ्क्तियां हैं वही मानो उस्की अलकावली हैं।

२. दीनता का अरि, अर्थात् दीनता दूर करने वाला।

सुरतरु कै काम धैन, कै हर, मुख मांग दैन,
धनपतिभंडार ऐन, जासु जग भिखारी ।
यूरप, अफगान पाल, आदिक कीन्हे निहाल,
विश्वपाल, कै गुपाल, नटवर, गिरिधारी ।
कै यह कोइ कमल फूल, कोमल, आनन्द मूल,
धूल १ हेत रूस हूस, भौंर भीर भारी ।
कै हरि चरनारविन्द मोचित मकरन्द विन्दु-
सिञ्चित सुख बाग हिन्द, श्रीधर बलिहारी ।

(११. ९. १८८५)

भारतश्री

जय जय जग मगित जोति, भारत भुवि श्री उदोति,
कोटि चन्द मन्द होत, जग उजासिनी ।
निरखत, उपजत विनोद, उमगत आनँद पयोद,
सज्जन गन मन कमोद बन विकासिनी ।
विद्याऽमृत मय मयूख, पीवत छकि जात भूख,
उलहत उर ज्ञान रूख, सुख प्रकासिनी ।
करि करि भारत विहार, अद्भुत रँग रूप धारि
सम्पदा अधार, अब युरूप वासिनी ।
स्फूर्जित नख कान्ति रेख, चरन अरुनिमा विसेख,
झलकनि पलकनि निमेख, भानु भासिनी ।

१ धूल; पराग, पुष्प रज ।

अञ्चल चञ्चलित रंग, झल मल झल मलित अंग,
सुखमा तरलित तरंग, चारु हासिनी ।
मञ्जुल मनि बन्ध चोल, मौक्तिक लर हार लोल,
लटकत लोलक अमोल, काम शासिनी ।
उन्नत अति उरज ऊप, बिलखत लखि विविध भूप,
रति अवनति कर, अनूप, रूप रासिनी ।
नन्दन नन्दन विलास, बरसत आनन्द रासि,
यूरप त्रय ताप नासि, हिय हुलासिनी ।
भारत सहि चिर वियोग आरत गत राग भोग,
श्रीधर सुधि भेजि, तासु सोग नासिनी ।

(९. ९. ८५)

भारतोत्थान

भारत चेतहु नींद निवारो
बीती निसा उदित भए दिन मनि, कब कौ भयौ सकारौ
निरखहु यह सोभा प्रभात वर प्रभा भानु की अद्भुत
किहि प्रकार क्रीड़ा कलोल मय विहग करहिं प्रातस्तुत
बिनस्यौ तम परिताप पाप सँग नभ नखत्र बिलगाने
निसिचर खग भूचर तजि तजि सब भ्रमन, भये इक आने
बिकसे कुमुद मधुर मारुत मदसने भौंर गुञ्जारत
बाला नवल कमल कोमल वपु उठि निज केस सँवारत
लगे सबै निज काज परस्पर, प्रेमपाग रस चाखन
देखौ बरति रह्यौ आनँद सुख, उठौ खोलि दोउ आंखन

गहरी नींद परे मति सोवहु, बात हमारी मानहु
"सोय खोय जागत पावत" जग कहन सत्य अनुमानहु
(३०. १. ८३)

भूमि भइ औरहि आज हमारी
जो सोभा सुनियत श्रुतियन में सो सब स्वर्ग सिधारी
कहां रहे कानन मन भावन मुनिजन वास सुखारी
कहँ सरिता सर विमल स्वच्छ थल आश्रय त्रिविध बयारी
कहँ वे मधुप झुंड मतवारे डोलत डारी डारी
कहँ वे मालति गन्ध अन्ध ह्वै सुधि वुधि देत विसारी
कहँ वे हरिन वालिका जूथन निर्भय विहरत प्यारी
मुनि कन्यन सँग करत केलि कहं तिन बिन होत दुखारी
कहँ वे मदन सदन घन कुञ्जैं, कहं कोकिला पियारी
कहँ वे सिखी नील कंठन निज आनँद नाद उचारी
कहँ वे विपिन वृच्छ कोमल दल धूम स्यामताधारी
कहँ हिंगोट ढेर बन दीसत वे सिसु विटप मझारी
कहँ द्विज घर मध्यान काल नित, अग्निहोत्र की त्यारी
कहँ वे पंडित साधु ऋषीश्वर, नृप अनर्थ अरि भारी
रहैन काहू ठौर देखि, मन भारत होत दुखारी
(१२. १२. ८३)

कजली

अभिनव कुसुम लता रमणीय अल सखि वृन्दावन कुञ्जम
पाण्डुर पुष्प रेणु कण मंडित, मत्त मधुप गुञ्जम

नव दल ताल तमाल बाल तृण मृदु मृणाल मुञ्जम्
श्रीधरशुककूजितगुणहरिमिलनाशासुखपुञ्जम्

(८. ९. ८५)

"हरि हरि" आनेतुं नव नीरञ्चल सखि कालिन्दी तीरम्
पिक सारिका समाकुल मञ्जुल वञ्जुल वानीरम्
मालतिका लतिकाऽलि विलोलन शील सुख समीरम्
कृष्ण कृष्ण कल नाम कलन पर श्रीधरैक कीरम्

(८. ९. ८५)

जमुना तीर कदम की छैंया झूलत राधा नन्द किशोर
परसत देह नेह नव सरसत, बरसत प्रेम अथोर
झूमत झुकत झटक झोटा लगि, भेटत लपटि बहोर
खग मृग पशु अवलोकि किलोलत, बोलत दादुर मोर
श्रीधर हू पै क्योंन होय सोइ सरस कृपा दृग कोर

(८. ९, ८५)

हरि सँग डारि डारि गल बहियां झूलत बरसाने की नारि
प्रेमानन्द मगन मत वारी, सुधि बुधि सकल विसारि
करि आलिंग प्रेम रस भीजत, अञ्चल अलक उघारि
टूटे बोल हिंडोल उठावति, रुकि रुकि अंग संवारि
श्रीधर ललित जुगल छवि ऊपर डारत तन मन वारि

(८. ९, ८५)

रिमि झिमि बरसन लागी बुंदियां चलु सखि खेली कजरी
विन्द्रावन की कुञ्ज गलिन मां मिलि जुलि कै सिगरी
उहां स्याम सँग चउरी खिलबै झुलबै एक घरी

सोरहु अंग सिंगार बनावहु, नौरंगी चुनरी
माथे खौर नासिका बेसर, गले माल दुलरी
कसि कसि कुचन कञ्चुकी बांधहु मुकुता दाम लरी
श्रीधर चलहु स्याम को रिझबै अधिक उछाह भरी

(८, ९. ८५)

जै जग तारिनि अधम उधारिनि, सुरधुनि जै जै श्रीगंगे
हिम गिरि गुहा विदारि वारि विस्तारित निज अंगे
अधिक अथाह प्रबाह प्रबल जल धवल धार संगे
मकर ग्राह अवगाह पवन चल तरल तर तरंगे
श्रीधर पाप कलाप शमन १ कृत शमन मान भंगे

(९. ९. ८५)

१ शमन = शान्ति वा नाश; यम।

मेघागमन

नाना कृपान निज पानि लिये वपु नील वसन परिधान किये
गम्भीर घोर अभिमान हिये छकि पारिजात मधु पान किये
छिन छिन निज जोर मरोर दिखावत पल पल पर आकृति कोर झुकावत
बन राह बाट स्यामता चढ़ावत वैधव्य बाल बामता बढ़ावत
यह मोर नचावत शोर मचावत स्वेत स्वेत बग पांति उड़ावत

सीतल सुगन्ध सुन्दर अमन्द
नन्दन प्रसून मकरन्द विन्दु
मिश्रित समीर बिन धीर चलावत
अंधियारि रात, हाथ न दिखात
बिन नाथ बाल विधवा डरात
तिनके मन मन्दिर आग लगावत
छिन गर्जि गर्जि, पुनि लर्जि लर्जि
निज सेन सिखावत तर्जि तर्जि,
दुन्दुभी धरनि अकास लचावत
मल्लार राग गावत बिहाग
रस प्रेम पाग, अहो धन्य भाग,
सुख पावत, आवत मेह महावत !

(जूलाई १८८५)

चन्द बधाई १

बढ़ौ यह नाथ सदा रजनी कौ
मदन प्राण वल्लभा वदन द्युति दमन रमन रमनी कौ
व्यथित कमोद मोद मन दायक नायक नभस्थली कौ
चित्रा चित्त चकोर चोर, यह घूंघट पट नलिनी कौ
औषध पति अति मृदुल अंसु गुन आगर सिन्धु अमी कौ
फटिक प्रभा सर अम्बु मध्य, प्रतिबिम्ब लगत अति नीकौ
त्रिभुवन धन आभा निकेत वर, जा बिनु जग जनु फीकौ
बसहु सदा आनन्द सदन सोइ, ह्वै ससिधर सिर टीकौ

बाल विधवा ओर

हे सखि कठिन मदन मरोर
सहि सकै सो कौन त्रिभुवन वेदना अति घोर
जबहि उठत उमंग हिय भरि अंग जोबन जोर
बढ़त उदधि तरंग सम, पुनि पुनि अनंग हिलोर
अगम दुस्तर हृदय जलनिधि, अति अथाह अथोर
डग मगाय डुलाय प्रति पल प्रबल पवन झकोर
अन्धकार अपार व्यापित, कहुं न दीसत छोर
बचै खेवट हीन किहि बिधि, धर्म नौका कोर

१ पं० श्रीधर पाठक कृत अपूर्ण मृगांक मौलि नाटक से [नवम्बर १८८४]

प्रार्थना अब ईश की सब करहु कर जुग जोर
दीन बन्धु, सुदृष्टि कीजै बालविधवा ओर

(४. ६. ८९)

जग निठुरई

सखिरी रीति बैरिनि भई
प्रीति मान मृजाद की विधि मूल सों मिटिगई
निरपराधिनि बालिका लघु बैस मृदु लरिकई
ब्याहि रांड बनाइये, यह कौनसी सुघरई
जन्म भर त्रिय देह जारत काम बल कठिनई
निबल प्रान सताइबे में, कहु कहा ठकुरई
स्वार्थ प्रिय पाषान सो हिय, निपट शठ निरदई
भयौ आर्य अनार्य भारत कुमति मन में छई
होय छिन छिन छीन तन सहि आपदा नितनई
मूढ़ सर्वस खोय निजहित सीख नेंक न लई
बाल विधवा स्राप वस, यह भूमि पातक मई
होत दुःख अपार सजनी निरखि जग निठुरई

(२७. ८. ८९)

निबल अबला

भारत वृथा विलम्ब न कीजै
कबलों कहा होय को जानै, छिन छिन जीतव छीजै
नीकौ औसर सदा मिलत नहिं, मिलें जान नहिं दीजै
त्यों त्यों भारी होय कामरी, ज्यों ज्यों जल सों भीजै
यह जग स्वारथ ही कौ साथी, पर दुख पै न पसीजै
ऐसे निठुर बापुरे के डर, क्यों अपकीरति लीजै
आरति हरन हार भारत, निज नाम सफल किन कीजै
बेगि उबारि निबल अवला गन, सुजस सुधा रस पीजै

(सितम्बर, १८८७)

सरस वसन्त

सरस वसन्त नवल पुनि आयौ।
पुलक प्रफुल्ल भई तरु बल्ली नवं अबला मन मोद बढ़ायौ॥
उमगे मन मतंग स्वाभाविक, अंग अंग नव रंग रँगायौ।
विरहिन खोजि खोजि मृगया प्रिय, कर अनंग सर चाप चढ़ायौ॥ सरसों पीत पीत केसर सोइ, सन्ध्या सीस पीत ससि छायौ। पीतम पीत वसन भूषन सजि, निज प्यांरिन सँग रंग जमायौ॥ प्रकृति रीति अपनी

निबाहि जग, सब कौं प्रीति उछाह सिखायौ। हम हत भाग्य बाल विधवा तिय, लखि बसन्त हिय ज्वाल तपायौ॥

(९. २. ८५)

मानमोचन

ठाडे हरि द्वारे प्यारी, छांडो यह मान
दरसन मिलन चाह चितवन के जाचक, छुधित समान
राधा नाम रटत निसि वासर करत तिहारौ ध्यान
मानत तुम्हैं आपनौ सरवस तन मन जीवन प्रान
पहली प्रीति रीति जो राखी सो अपने जिय आन
आदर देहु भेटि भुज श्रीधर हरि अपने प्रिय जान

(१०. ९. ८५)

फाग

किंकिनि नूपुर धुनि अति सुहाय
सोभा अनूप नहिं बरनि जाय
खेलत सखियन सँग कृष्ण फाग
चाचरि गावत हरि विविध राग
एक ओर कृष्ण, सब सखन संग
दूजै राधा दल, अति उमंग
अति मधुर बोल, अति मीठी तान
गन्धर्व सुनत, चढ़ि निज विमान

आभरन अनेकन, जगमगायं
लखि रूप काम और रति लजायं
मारत कुंकुम भरि भरि गुलाल
आनन्द उदधि, व्रज जन निहाल
बरसावत नभ सुर वृन्द फूल
श्रीधर चरित्र यह सुख कौ मूल

(१४. २. ८३)

राम हिंडोला

(सूरदास का अनुकरण)

हिंडोलमा माई झूलत रघुकुल चन्द
सब सखा निरखत वदन प्रभु कौ होतु परम अनन्द
मनि विविध मंडित सुभग दंडित परम सुन्दर रंग
सुभ चारि डांड़ी विधि रचित हित सहित दोउ अलंग
मानिक प्रवाल विसाल दल लर मुक्तिका कमनीय
वैदूर्य विलसत लसत पुनि नग हीर अति रमनीय
पुनि विविध चर्चित पट वसन लटकत अनेक दुकूल
कलधौत कुसुम सुगुच्छ स्वच्छ विरंचि मन भ्रम भूल
अति रम्य अम्बर सयन हित, प्रतिबिम्ब रतन प्रकास
प्रतिभास प्रभु सुखरासि, वास विचित्र विविध विलास
सिर हेम मनि मंडित मुकुट वर तिलक भाल विसाल
श्रुति लोल कुंडल झलक अलक कपोल मनु भ्रमराल
गल माल परम रसाल बाल कृपाल रूप प्रसन्न

कर कटक चटक अनूप पट कटि सूत्र युत सम्पन्न
पुनि चरन कमल निहारि नख नव जोति रवि छवि मन्द
हंसि बाल रघुवर किलकि झूलत, परम आनँद कन्द
महताब १ ध्यावति रूप तब अवधेस रघुकुल नाथ
प्रभु दीन वन्धु दयाल श्रीधर निरखि नावहि माथ

(१८८०)

झूलत रघुकुल राज दुलारे।

कञ्चन जटित अनेकन विद्रुम भूषन वसन हिंडोल संवारे॥ झूमत मत्त घटा दामिनि युत चञ्चल अनिल अधिक अंधियारे। मन्दिर महल विपुल सोभा छवि, दिनकर तुल्य दीप उजियारे॥ विविध विहंग वाटिका कूजत, अति आनन्द मगन मतवारे। बनिता मिलि मलार कल गावें, नैन राम श्री मुखहि निहारे॥ झूलत कुंवर अवध रानी कौ, देखौरी नव रूप दुलारे। पीवत दृग भरि भरि जननी छवि, हृदय प्रेम पुनि पुनि पुचकारे॥ भौंहे कुटिल डिठौना माथे, मुख में अल्प अंगूठा डारे। श्रीधर बाल पालने में ते उठि महताब कुंवरि उर आरे॥

(१८८०)

झूलत बाल तन रघुवीर
अति सुघर हिंडोल सोहत चारु विलसत चीर
रतन जटित अनूप डांड़ी लसत रेसम डोर
हंसत किलकत मुदित ह्वै, प्रभु कोसलेस किसोर

१ महताब कुंवरि, कोटले की रानी के अर्थ बनाया गया।

नवल तिय तहं तान गावें, परम आनँद लेहिं
कमल लोचन निरखि पुनि पुनि विहँसि झोटा देंहि
सीस सोहत चौतनी, कर कटक जुगल अनूप
कटि विराजत धौत पट, पद पैंजनिन कौ जूप
कर्न कुंडल माल गल, अरु अलक अवलि मलूक
निरखि छवि यह बाल पन की रह्यौ श्रीधर मूक

(१८८०)

राम विलाप

भैया लछमन हो! सिया बिन दुख जीय
अतिमृदुगात, तात! कोमल कृश, प्राण पियारी सीय
वुही कुटी, वुही लता भवन घन, वुही विटप, वुही भूमि
वुही दण्डकाऽरन्य, मत्त जहं विहरत द्विप गन झूमि
वुही सिला, वुही थल मृगया कौ, वुही सरित तट स्वच्छ
वुही मत्त मधु कर मालति जहं, स्रवत लता अरु वृच्छ
विना विदेह नन्दिनी दरसन, लगत न एकहु अच्छ
हिमकर किरन देखि दहकत तन, लछमन, यह मम लच्छ!

(जून १८८१)

सिय सुधि अबहु न पाई, एहो! बरखा ऋतु बीतिगई
विमल अकास प्रकासित चन्दा, नभ नूतन छवि छई
सूखे पन्थ, कास बन फूले, नलिनी विकासित भई
स्रोता, सरित, स्वतट ह्वै आए, निर्मल सर छवि नई

खञ्जन चपल दियौ अञ्जन दृग, रवि सोभा अधिकई
नृपदल चले नृपन के देसन, तिन प्रति जुद्धै ठई
हम कायर सिय मिलन जतन की, अजहुं न चिन्ता भई
स्वांति बूंद जल चातक पायो तृषा तासु बुझि गई
लीलाधर १ हम निपट अभागे मन दुख दहकत दई ।

(जूलाई, १८८१)

गोपिकागीत २

कियौ कृष्ण जब बन गमन गोपी भई बिहाल
कहि कहि लीला कृष्ण की दुख करि काढ्यौ काल
कहति परस्पर मिलि सबै बिरह व्यथित नव बाम
कलन परति उन बिन सखी कष्ट देत अति काम

बाम भुजा पै बाम गंड ३ भृकुटी करि बांकी
अधर मुरलिया धरी अमित सोभा छवि जाकी
मृदु अंगुरिनु करि मुरलिया जबै बजावत स्याम
सिद्ध यक्ष गंधर्व त्रिय इक सँग होति सकाम
स्याम विन कैसे जीओं आलि

हृदय विराजत हार कंठ राजत बनमाला
लीने त्रिभुवन मोहि कान्ह दीनन प्रतिपाला

१ पं० श्रीधर पाठक के पूज्य पाद पिता—जिन्की प्रसन्नतार्थ यह पद रचा गया ।

२ भागवत से । ३ गंड = कपोल ।

जवै बजावत बांसुरी गौ चारत बन माहिं
खग, मृग, पशु, धुनि सुनि सबै, चित्र लिखित रहि जाहिं
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

मोर मुकुट बन लतनु मल्लवर वेष बनायौ
ललित कांछनी कछी त्रिविध छवि रूप सुहायौ
सव गोपनु सँग सरित तट जबै बुलावत गायँ
चरण रेणु हित ते सरित अचल धार ह्वै जायँ
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

ब्रह्मा आदि सुरेश शेष गावत जस जाकौ
आदि पुरुष भगवान भेद पायौ नहिं ताकौ
ऊँचे सुर करि गौन कों जब टेरत बन माहिं
कुसुम लता हरि जानि तहँ चुअत प्रेम अधिकाहिं
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

तिलक भाल गल माल भ्रमर भौंरत मद जाके
ता छिन बेनु बजाय संग गावत हरि ताके
सरवर हंस विहंगगन मोहित ह्वै सुनि तान
इकटक सब रहि जात हैं तन मन लगि भगवान
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

ललित छबीले केश गंड कुंडल की झांईं
गल वैजन्ती माल लाल त्रिभुवन के सांईं
हर्षित ह्वै गिरिवर विषैं सुर पूरत नँद नन्द
त्रिभुवन पति अपमान डर गरजत घन अति मन्द
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

विविध गोप रस खेल हेल परबीन गुपाला
खेंचत सुर भरि तान गान गुन बुद्धि बिशाला
सुनि ब्रह्मादिक देव सब गूढ सुरीली तान
रहे चकित विस्मित सबै भेद परचौ नहिं जान
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

ध्वजा वज्र अरु कमलपत्र-चिन्हित पद धारी
मत्त गयन्दी चालि आलि हरि जन सुख कारी
धरी अधर जब बांसुरी मोहन रूप निधान
जड़मति हम गोपी भई सुधि बुधि हीन अजान
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

गौ संख्या के हेत गिनत तुलसी की माला
कबहुँ कन्ध धरि भुजा तान गावत नँदलाला
क्वणित वेनु सुर सुनि सखी सबै हरिन नव बाल
हम समान गृह त्यागिकें अनुरोधे नँदलाल
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

कुन्ददाम सुललाम वेष गौअन बिच भ्राजें
सखन सहित बल श्याम जमुन जल क्रीड़त राजें
मन्द पवन बन गन्धयुत बंहति मृदुल मृदु भाय
बरसावत पुष्पावली बन्दीगण तँह आय
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

गोवरधन कर धरचौ हरचौ दुख ब्रज जनताको
बन्दत चरन सरोज वृद्ध ब्रजवासी जाको
धूलि लगी मृदु गात सूं ललित मनोहर वेष

गौ लावत आवत सखी ब्रजजन सुख निश्शेष
स्याम बिन कैसें जीओं आलि

रतनारे अति नैन मैन मद खंडन हारी
बदन पांडु मृदु गंड कर्न कुंडल युग धारी
ग्वाल बाल सँग स्याम जब लावत गौअनु आपु
उदित निशामुख चन्द सम हरत सकल दिन तापु
स्याम बिन कैसे जीओं आलि

ऐसे श्री ब्रजराज गुण गावति नव ब्रजबाल
काल बितावति सो भई हिरदैं धरि नँदलाल

यह गाथा गोपीन की प्रेम भरी गंभीर
लीलाधर १ आनँद भयौ पढ़त सुनत जिमि कीर

[३१. ९. ८१]

१ पं० श्रीधर पाठक के पूज्यपाद पिता जिनकी प्रसन्नतार्थ लिखा गया।

कृष्ण गुण गान

चिदानन्द सुख रूप, भक्त दुख कष्ट कूप सन्निस्तारे
मन्द बुद्धि मैं, कृष्ण गुन गान करूं, पद आधारे (टेक)
भक्त हेत अवतार लियौ तुम कियौ असुर दल संहारन
प्रभु! पाप निवारन, दुखित भवभार उतारन सुख कारन
अद्भुत लीला केलि, गोप गोपिन सँग निसिवासर कीन्हे
प्रभु! आनँद लीन्हे, भक्त अनुरोधिन कौं अति सुख दीन्हे
भक्तन के मन कुमुद विकासन हेतु, चन्द कुल उजियारे
मन्द बुद्धि मैं०

पतित अधम उद्धार, सार संसार मोह भ्रम कारी के
प्रभु! पिय प्यारी के, तात वसुदेव, भ्रात हलधारी के
नन्द जसोदा प्राण, नाथ गोपिन के, काम पूरन कीने
प्रभु! नित रस भीने, सरस आनन्द प्रेम अम्मृत पीने
लीला अगम अकथ्य, तथ्य गति गूढ़, नाथ जगके, प्यारे
मन्द बुद्धि मैं०

शकटासुर मुरमर्द, वर्द वाहन पूजित पद, अघहारी
प्रभु! खर संहारी, पूतना प्रान हरन, जन सुखकारी
ग्वाल बाल संग धेनु लिये बन वेनु बजावत बनमाली
प्रभु! बहु बल शाली, विघ्न सब मेटि नाचि, नाथ्यौ काली
धसत गोपिका गेह, प्रेम वस, माखनके चोरन हारे
मन्द बुद्धि मैं०

त्रिगुनातीत, पुनीत, प्रेम रस रीति प्रीति पालन हारे
प्रभु! दुन्द निवारे, दीन जन बन्धु, अन्ध उर उजियारे
पावन परम उदार चरित नित नई कीर्त्ति लीलाधारी
श्री रसिक बिहारी, मुरलिका हाथ, साथ राधा प्यारी
करौ विनय मम कान कान्ह लीलाधर मन मोहन प्यारे
मन्द बुद्धि मैं०

गोपी विलाप

आयौ व्रज अक्रूर कालि, तिन्ह कान्ह कुँवर बातन दीने
सखि! सुनौ गोपिका, आज व्रजराज गमन मथुरा कीने (टे०)
नहिं सुहाय यह भूमि गोप गोकुल व्रज सब लागत फीके
सखि! लगत भयानक, धाम बिन स्याम सुघर प्यारे जीके
बोलत पिक शुक वृथा, जमुनतट त्रिविधपवन मन नहिंभावै
सखि! दुख उपजावै, स्याम सुधि वार वार हिरदै आवै
उठत विरह की हूक, कोकिला कूक कूक हिय धड़कावै
सखि! जिय डरपावै, लगत शशि किरन तेज तन दहकावै
होय मिलन कब, प्रान नाथ आगमन, स्याम आनँद भीने
सखि! सुनौ०

स्रवत विटप मधु धार, वारि वरसत बूँदन घन घोरै है
सखि! मुदित जीव सब, हमें विधि विरह वारिनिधि बोरै है
रिमिझिमि बरसत नीर, पीर तन बढ़त, जीय उमगत आली
सखि! देखि घटाघन, गगनमन उड़त, दुखित बिन बनमाली

उमड़त आवत घटा गगन सखि ! काम प्रबल दल साज्यौ है
हमैंजानि स्यामबिन, निबल जनव्यथन डंक तिन्ह बाज्यौ है
कृत प्रपंच, सखि ! पंच बान, धृत सान, बिविध आयुध लीने
सखि ! सुनौ०

नव वसन्त

जय जय भारत भुवि नव वसन्त
जय नन्दन रुचि दीपित दिगन्त
कल रव नव शिक्षित मधुप माल
मञ्जरित मृदुल नव दल रसाल
पिक शुक निनाद नन्दित निकुञ्ज
द्वि गुणित वियोगि जन दहन पुञ्ज
कृत सशर शरासन पञ्च बाण
किसलय दल परिकल्पित कृपाण
कमनीय निशामुख निशाराज
सम्मोहित बुध सहृदय समाज
वर्द्धित बाला वक्षोज भार
मत्त द्विप दर्शित मदोद्गार
सुस्निग्ध समीरण रणत्कार
सम्पादित पद्म श्री प्रसार
मकरन्द सुरभि सरघा विहार
कारित कुसुमासवसमाहार

माधुर्य मदालस रस निधान
विज्ञापित रति विभ्रम विधान
स्वाभाविक सुख सन्तति निदान
श्रीधर कोकिल कृत कीर्त्ति गान

[४. २. १९००]

वसन्त

प्यारी नवल रसीली आई ऋतु वसन्त
भये सुजन सबै आमोद वन्त
बोलत मीठे सुर पक्षि बृन्द
छायौ त्रिभुवन विच अति अनन्द
पशु पक्षिन हूँ भयौ अति हुलास
सब करत केलि सुख सों विलास
द्रुम लता सलोनी लगत खूब
नव पल्लव नव कलियन सों डूब
सरसों खेतन कैसी सुहाति
अति ललित पीत फूलनकी पांति
कचनारि कुन्द कलिका चमेलि
सुठि विविध मनोहर पहुप बेलि
टेसू प्रफुलित छवि अति मलूक
कोकिल आमन चढ़ि करत कूक
आमन छायौ सौरभ सुबौर
पिक रवत डार तिन्ह ठौर ठौर

सरवर पूरित अरविन्द जाल
तहां भ्रमर वृन्द गूँजत रसाल
डोलत मधु माखी फूल फूल
सोभा सुन्दर ऋतु सुखकी मूल
सरिता तट सोहत चक्र वाक
दुहुँ प्रेम सने रस चखत छाक
जहं तहं तड़ाग वर हंस पांति
सोभा छवि छादित विविध भांति
ऐसे समय होत रसिकन हुलास
मन प्रेम बढ़त चाहत विलास
सब जुरत मिलत करि करि सिंगार
पट पीत पहरि सजि बहु प्रकार
लै लै अबीर बुक्का गुलाल
मिलि सजन परस्पर मलत गाल
गावत वसन्त पद बेर बेर
उमड़त उमंग मन फेर फेर
नित जात पुलकि प्यारीन पास
आनँद प्रगटत निज हिय हुलास
पुनि करत केलि अवलान संग
विहरत पुजवत निज मन उमंग
इहि भांति मनुज वर अरु विहंग
भोगत सुख नित निज वाम संग
निरखत छवि ऋतु वर की अनूप
सुखमा सलोनि सुख की सरूप

अहो धन्य धन्य जगदीश धन्य
जिहि सृष्टि विविधि लीला अगन्य
गाइय अनन्त गुण तासु आज
मिलि मिलि निज निज गृह सुख समाज
बाढ़िय भारत कुल नित्य प्रीत
श्रीधर अभिलाषत अति बिनीत

[१३. २. १८८३]

विकटोरिया चिरजीवो १

LONG LIVE VICTORIA

जीवौ विकटोरिया महारानी
जाके जस की विमल पताका, सब जग में फहरानी
सुचि सनेह सुन्दर सुठि सोभा, सब सुख सम्पति सानी
नीति न्याव की नाव नवल, नित नूतन नेक निसानी
जब लग सूरज, जब लग चन्दा, जब लग सागर पानी
तब लग तेरौ राज अटल रहै; सफल होय सुभ बानी

[१३. १० ९६]

१ नैनीतालस्थ नाट्य समाज (Himalayan Amateur Dramatic Club) के अर्थ रचागया, और १३ अक्टोबर १८९६ को शकुन्तला के अभिनय के अनन्तर दर्शकों को बांटागया और रंग शाला में गाया गया–

लावनी चेतावनी

मनोविनोद का शोधनपत्र

पृष्ठ ६७ पंक्ति १७

अशुद्ध

तिन कौ सब जीवन जाय हाय दुख ही में

शुद्ध

जो आयु गमावें दुखमय जीवन ही में

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७०	८	हिन्ह	हिन्द
७४	८	सुशसान	सुशासन
९४	१८	उनहों	उनहीं

तिन कौ सब जीवन जाय हाय दुख ही में
जोवन मरोर अति घोर काम की पीड़ा
सहनौ या कौ नहिं सहज खेल वा क्रीड़ा
बहु होत गुप्त नित पाप, धर्म विसराई
किहि रीति०

अहो धन्य धन्य जगदीश धन्य
जिहि सृष्टि विविधि लीला अगन्य
गाइय अनन्त गुण तासु आज

जाके
सुचि
नीति
जब ल
तब ल

१ नैनीतालस्थ नाट्य समाज (Himalayan Amateur Dramatic Club) के अर्थ रचागया, और १३ अक्टोबर १८९६ को शकुन्तला के अभिनय के अनन्तर दर्शकों को बांटागया और रंगशाला में गाया गया–

लावनी चेतावनी

निज देश दशा किन सोचहु सब मिलि भाई
किहि रीति कुमति पथ मिटै सकल दुख जाई
पण्डित प्रवीण नर कुल धुरीण गुण राशी
सब सुनहु आर्य वर भारत भूमि निवासी
कितने पातक नित होत तिहारे घर में
कितनी अवला जन गिरत दुःख सागर में
बालक विवाह कितने नहिं नित होते हैं
जिन्के फल लखि २ कौन नहीं रोते हैं
यह लोक चाल अति बुरी देश में छाई
किहि रीति०

पाई नहिं शिक्षा देहोन्नति नहिं कीनी
नहिं गयौ लड़कपन रेख ओठ नहिं भीनी
दूधिल मुख कोमल गात बैस अति बारी
सोइ नियत व्याह कौ काल धन्य बलिहारी !
सहसन विधवा नित होत बालपन ही में
तिन को सब जीवन जाय हाय दुख ही में
जोवन मरोर अति घोर काम की पीड़ा
सहनौ या कौ नहिं सहज खेल वा क्रीड़ा
बहु होत गुप्त नित पाप, धर्म विसराई
किहि रीति०

जब लग यह खोटी चाल दूर नहिं कीजै
नहिं होय देश कल्यान जान यह लीजै
पहले तुम बालक व्याह रीति कों तोड़हु
पाछे विधबा त्रिय कष्ट हरन मन जोड़हु
सम्पदा सौख्य की वृद्धि सदा मन धारौ
निज पतित देश कों भ्रात बेग उद्धारौ
फैलावहु विद्या विविध गेह अपने में
जिन होउ आलसी कबहु तमक सपने में
यह शुभ अनुमति हम ने तुम कों बतलाई
किहि रीति०

[२८. ९. ८४]

आदि मंगल

अच्युत, अनादि, अनन्त, अगम, अमध्य, अलख, अगोचरम् । अच्चर, अलौकिक, अटल, अज, अद्भुत, अनूप, अधीश्वरम् ॥ अनुचरअनुग्रहकार, अचल प्रन, अमरअभयप्रदायकम् । अनवधि, असीम, अजेय, अमित, अदृश्य, अतनु, अमायकम् ॥ अनुमान आदिअतीत, अति उज्जल चरीत, अकायकम् । अखिलेश, अतुल, अशेष, अगुन, अनाथनाथसहायकम् ॥ अव्यक्त, अग्र, अमोघवर, अघ ओघ हर, अशुभापहम् । अति रिक्त जग सों जासु गति, पद अब्ज तासु नमाम्यहम् ॥

हिन्द बन्दना

जय देश हिन्द, देशेश हिन्द
जय सुखमा सुख निश्शेष हिन्द
जय धन वैभव गुण खान हिन्द
विद्या बल बुद्धि निधान हिन्द
जय चन्द्र चन्द्रिका विमल हिन्द
जय विश्व वाटिका कमल हिन्द

जय कला कलापति प्रमुद हिन्द
जय विकसित मुनिजन कुमुद हिन्द
जय मलय मधुर मारुती हिन्द
जय कुवलय कल भारती हिन्द
जय विद्या विधु नव उदय हिन्द
जय जयति दयामय हृदय हिन्द
जय तीर्थ हिन्द जय पुरी हिन्द
जय प्रकृत ललित माधुरी हिन्ह
जय शोभा छवि नित नवल हिन्द
जय धूलि धूसरित धवल हिन्द
जय सरसिज मधुकर निकर हिन्द
जय जयति हिमालय शिखर हिन्द
जय जयति विन्ध्य कन्दरा हिन्द
जय मलय मेरु मन्दरा हिन्द
जय चित्र कूट कैलास हिन्द
जय किन्नर यक्ष निवास हिन्द
जय शैल सुता सुर सरी हिन्द
जय यमुना गोदावरी हिन्द
जय सत्य हिन्द जय धर्म हिन्द
जय शुभाचरण शुभ कर्म हिन्द
जय प्रथा हिन्द, जय नेम हिन्द
जय निश्चल ईश्वर प्रेम हिन्द
जय भाव हिन्द जय भक्ति हिन्द
जय विपुल विलक्षण शक्ति हिन्द

जय चतुरानन चातुरी हिन्द
जय चमत्कार प्राचुरी हिन्द
जय आगम पटु पाटवी हिन्द
जय दुर्गम विटपाटवी हिन्द
जय उत्पाटित जग पटल हिन्द
जय धर्मधुरन्धर अटल हिन्द
जय असुर समर समवेत हिन्द
जय जय प्रसिद्ध रण खेत हिन्द
जय कुवचन मुख सम्पुटित हिन्द
जय सूनृत प्रिय प्रस्फुटित हिन्द
जय दलित यवन दल दुष्ट हिन्द
जय भुज बल पुष्कल पुष्ट हिन्द
जय पावन परम पुनीत हिन्द
जय जय जग लोकातीत हिन्द
जय नगर ग्राम अभिराम हिन्द
जय जयति जयति सुख धाम हिन्द
जय विमल विमल बन माल हिन्द
जय विद्रुम हीर प्रबाल हिन्द
जय उज्ज्वल कीर्ति विशाल हिन्द
जय करुणा सिन्धु कृपाल हिन्द
जय जयति शास्त्र आचार्य हिन्द
जय जयति सनातन आर्य हिन्द
जय जयति सदा स्वाधीन हिन्द
जय जयति जयति प्राचीन हिन्द

(अगस्त, १८८९)

समस्या पूर्ति

सनक सिरोहिन की फनक फरीन की

वेद ग्रह मिथुन विधु ईसा सम्वत्सर में
सजी सेन पृथीराज समर प्रवीन की
पानीपत पटपर में सरपट सुरंग छाई
चमू चतुरंग उतै भरत अरीन की
दोऊ दल प्रवल प्रहार अस्त्र शस्त्रन कौ
दामिनी दमंकै मनो विकट झरीन की
कुंजर चिंघार, हय हींसनि, निनाद मारू
सनक सिरोहिन की फनक फरीन की १

सुदृढ़ सुवीर सर तरकस कमान कांधें,
तुपक तमंचा बांधें, झलक जरीन की
इब्राहिम दिल्ली पति सेना सजाई निज,
बाबर मुकाविले कों सहस करीन की
मुगल समूह संग, लोदिन कौ जूह जूझै,
फटत लिलार, धार रुधिर नदीन की
गोलन की धाड़ औ चिंघाड़ चंड हाथिनकी
सनक सिरोहिन की, फनक फरीन की २

सत्रैसै सत्तावन साल के सुहाल माहिं
विकट कराल सैन ब्रिटिन धुरीन की
यवन दबंग बंग देस के नवाव संग
निकट पलासी, ख़ासी फ़ौज फ़रासीन की
लरत विसाल बीर, धरत न तनक धीर
डरत अधीर सुनि बाड़ कड़ाबीन की
गोरन की रोर, घोर बाजे अंगरेजी की
सनक सिरोहिन की फनक फरीन की

अष्टादस व्यासी की वरस माहिं सरस भूमि
भई दैव योग तें अरस मिसरीन की
एका सिधारौ, रह्यौ एक न विवेक वारौ
ठनौ जुद्ध सैन संग ब्रिटिन धुरीन की
भारत सपूत सूर इंगलिश अनीक ओर
लरे जाय साथ फ़ौज यवन बलीन की
जै जै की घोर औ बहोर रिपु रोर तहां
सनक सिरोहिन की, फनक फरीन की

(१९. १. ८४)

अब तो तुम भारत नींद तजौ

जब तें महमूद चढ़ाव कर्यौ, जब तें जय पाल गयन्द भजौ। जब तें पृथिराज अकाज भयौ, जब तें कनवज्ज नरेश लजौ॥ जब तें यहां गोरि गुलाम के हेत, अचेत ह्वै आपनौ ताज सजौ। तब तें अब लौं रहे सोवत ही, अबतो तुम भारत नींद तजौ॥

सत द्वापर के जुग में तुम्हरौ, धन धर्म धुरीन सरूप छजौ। जुग त्रेता में नेता भए भरिपूर, अधूरे न काहू प्रकार बजौ॥ ब्रज गोप बधू चित चोर के जन्म पै, आनँद सों निज गेह रँजौ। इक वर्स हजार तें सोवत हौ, अब तो तुम भारत नींद तजौ॥

तुम्हरे पति हैं अंगरेज़ अबै, जिन रंग विरंग कौ साज सजौ। जिन की प्रभुता सों अनेक अनोखी विभूति कौ ह्यां समवाय गँजौ॥ जिन के उतकृष्ट सुशासन सों, अनजान पनौ बहु दूर भजौ। सुभ ज्ञान कौ भानु उदोत भयौ, अब तो तुम भारत नींद तजौ॥

जब सों तुम सोय गये वर बीर, अधीरज लोक भयौ विरजौ। तुम्हरी सब सन्तति दीन भई कुल कौ कुल कूदि कुमार्ग मजौ॥ इहि काल अनेकनु ज्ञात भयौ निज दुर्गति की गति कौ भरजौ। हम टेरि पुकारत हैं सबरे, अब तो तुम भारत नींद तजौ॥

(११. १. ८४)

कबलों यह चालि चलैगौ अरे ?

नित झेलत हानि अनेकनहीं, अविवेक में लीन सदा अँधरे। सहसावधि द्रव्य लुटावन में, नहिं सोचत नेक वरे न परे॥ लघु बालक व्याहि चढ़ावत है, निज सीस पै पातक पाप खरे। समझावत हारि गये हम तो, कब लौं यह चालि चलैगौ अरे ?

घर नारि जन्यौ लरिका जबहीं, बजवावत खूब नगारे

खरे। नचवावत द्वार भली गनिका गन, आनँद गान निसान धरे॥ बहु भीर जिमावत विप्रन की, धरवावत नाम कुढंग ढरे। पुनि व्याहत वैस अजान ही में, कब लों यह चालि चलैगौ अरे?

एक सेठ बड़ौ धनवान रह्यौ, तिन आपने तीन विवाह करे। जनमी तिरियान कें तीनि सुता, जिन देखिकें, चन्द विभा विगरे॥ परि पांच वरीस की व्याहि दईं, पति बालक चेचक व्याधि मरे। शठ भारत रीति कुरीति महा कबलों यह चालि चलैगौ अरे?

जब वे विधवा भईं षोड़श वर्ष की, जोवनजोर मरोर भरे। तिन यार करे अपने अपने, छिपि लागहिु भोगन भोग खरे॥ मद रंग उमंग के आनँद में, गृह त्यागि गयीं, पिय के दगरे। शठ भारत कौन मृजाद रही, कबलों यह चालि चलैगौ अरे?

(१८. ११. ८४)

कीकर पतान में

वंसी कौ कलंक कान्ह झूठौ ना लगावौ हमें
हम निरदोषी तुम भूले हौ गुमान में
पैसा की अधेला की, छदाम की न दाम में सो
ऐहै किहि काम स्याम हमरे घरान में
ढूंढौ कहूं वंसी वट निकट तमालन में
जमुना के कूल कै करील विरवान में
हमने लई ना लाल अन्तहां गई ना है है
विपिन लतान में कि कीकर पतान में

(१८८४)

वसन्त ऋतु आईरी

सीतल सुमन्द, मदगन्ध सनी पौन बहै
मधुप विहंग संग गावत बधाई री
सिसिर सुखाने, ते समस्त सरसाने, नव
कुसुम किरोड़ कञ्ज कलित निकाई री
दसहू दिसान में निसान दरसाने जाके,
बांके मृग अंक की अनोखी छबि छाई री
अति मन भाई, रति काम सुख दाई, अहो
फेरिहू सुहाई, सो वसन्त ऋतु आई री

(१८८४)

तबहीं तें मयंकै कलंक लग्यौरी

मन्दर शैल सों माथ्यौ पयोधर, रत्नन माहि यहू निकस्यौरी। सुन्दर रूप मनोहर सी छवि, प्यारौ लग्यौ तिहुं लोकन कौंरी॥ पै जब तें अबलान कों याने पिया के वियोग में ताप दियौरी। तेरी सों एरी भटू सजनी, तबहीं तें मयंकै कलंक लग्यौरी॥

(अप्रैल, १८८४)

चिरजीवी रहौ विकटोरीया रानी

LONG LIVE QUEEN VICTORIA 1

तेरे उछाह में आज प्रजागन, फूली फिरे अति आनँद

1 Composed during the Jubilee of 1887.

सानी। गावत गीत प्रतीति भरे, रस रीति सों प्रीति प्रथा उर आनी ॥ मंगल मोद तरंग में आय, भुलाय दई निज खेद कहानी। नाम उचारि पुकारत हैं, चिरजीवी रहौ विकटोरिया रानी ॥

भारत भूमि रही दुखिया, बहु काल अनाथ तिया के समानी। छाई अनीति अंधेरी चहूं दिसि लम्पट भूप करें मन मानी ॥ ताहि उबारचौ दया करिकें, अति दुर्बल दीन दुखी जब जानी। न्याय कौ दीप प्रकास कियौ, चिर जीवी रहौ विकटोरिया रानी ॥

(३. ३, ८७)

(कृष्ण जन्मोत्सव)

एहो सखि आज यह बजत बधाई कहां, नौवत की घोर सुनि परियत बार बार। क्यों मन फूले से भूले से फिरत गोप, करैं दधि कांद कीच कुमकुम डार डार॥ श्रीधर जू सुघर सयानी सब गोप नारि, सजत सजावत क्यों खरिकन झार झार। कौन काज गोकुल में इतिक अनन्द आज, तोरन पताका क्यों फहरति द्वार द्वार ॥

आज क्यों गोकुल गलीन अलबेली नारि, सखी औ सहेली सँग हेली करति हैं। गोरस गुलाल लाल मिलि मिलि मलति गाल, बौरी सी बाल ग्वाल लाज न धरति हैं ॥ पुलकित अंग अंग गावति हैं संग संग, अधिक उमंग रंग रुचि मन भरति हैं। श्रीधर जू इतिक उछाह अवगाहन के, कारन की थाह कछू समुझि न परति हैं ॥

(९. ९. ८५)

चित्र काव्य

(१)

A रे
B र
C रे ना परहु रन खेत माहि
D ल तो निहारौ निज, दिग्गज लखात है।
E स कों मनाइ
F, G हति बिचारि देस, तुरत विदारि
H मू कितेक बात है॥
I, J मलेच्छ सेन,
K ती हैं विचारी भला, लरि
L राई भाई प्रजा अकुलात है।
M द साने सूर, माम पै न डारौ धूर,
N युद्ध औसर पै ढील ना सुहात है॥

(दिसम्बर १८८४)

(२)

O खौ है समैया, नाहि
P र कौ सुनैया कोऊ, धीरज धरैया, भैया एक ना दिखात हैं।
सर
Q लर देस में फिरायौ कलिराज आज,
R त अवस्था भूठ भारत की वात हैं॥

S ढील आलस कौ
T कौ लगायौ सिर,
U थन के यूथ, आर्य
V जके नसात हैं।
W न पास एक टैक्स
X इज़ अनेक, पोत हू स
Y देते देत
Z रात हैं॥

(जनवरी १८८९)

जय श्री सीता राम

श्रीमति श्री गुन वती सती महताब कुमारी
मति विसाल प्रतिपाल करै निज प्रजहि सुखारी
तीरथ विधिवत सेवि कृतारथ जीवन कीन्हौ
महि मंडल के माहि परम निर्मल जस लीन्हौ
हनि काम क्रोध मद मोह की प्रखर सेन दृढ़ नेम सों
तापित मानस सींच्यौ सलिल सियाराम पद प्रेम सों
बर विवेक की रेख राज कारज में सरसत
कुत्सित १ पथ अवरोध २ नीति पद पद पर दरसत

१. कुत्सित = निन्द्य, खोटा—२. अवरोध = रोक

मान लहैं सन्मान सहित गुनवान जहां नित
रीझनि भोज समान दान बलि कर्न कल्प १ कृत
कूजत जा की कीरति कलित कीर भीर बुधवर सदा
जग जियौ सुखी ह्वै सो, बढ़ौ कोटि कोटि गुन सम्पदा
यमित वासना शमित दमित इन्द्रिय सन्तापा
श्रीरघुपति चरनारविन्द दृढ़ भक्ति प्रतापा
सीमा नहिं अवधेस नेह उर उदधि अथाहा
तामें मन वच कर्म नदिन कौ मिल्यौ प्रवाहा
राजीव बन्धु २ कुल तिलक श्रीराम नाम कलगान रत
महताब कुमरि कोकिल करहु, भक्ति प्रेमरस पान नित !

(५. १. ८८)

रीवाधीश को आशीर्वाद

श्रीयुत श्रीमहाराज अहो रीवेश प्रतापी
महि मंडल महं जासु वंस विरुदावलि व्यापी
हारे कवि खोजत जिहि कुल कीरति उपमा कों
राजत जहं स्वच्छन्द स्वच्छ गुन सदां सदां को

---

१ कल्प = तुल्य-२ राजीव बन्धु = रवि, सूर्य

जस जासु वंस व्यापित विमल पूरनचन्द प्रकास सम
रीझत चकोर सज्जन कुमुद, खीझत खल कौसिक१ अधम।

वानी बुद्धि विलास वचन रचना चतुराई
धीर वीर गम्भीर नृपति रघुराज दिखाई
शत सहस्र पद पहुप माल रचि रुचिर बनाई
कोशलेश कुल केतु कलित कीरति कमनाई
श्रीरामचन्द्र लीला सुमन रस लोभी षटपद सकल
धनि धन्य २ धुनि गुंजरत लहि सुवास नित २ नवल

रवि सम तेज प्रताप सदा रवि के सुअनन कौ
कारन कों अनुसरत काज सन्देह न तनकौ
आकर तिहि प्रताप के पूरब पुरुष तिहारे
शीर्ष प्रान सँग धर्म रेख के राखन हारे
वाकुल के सब सद गुनन सों सोभित श्री वेंकट रमन
दस गुन दुचन्द बाढ़ौ, रहौ प्रजापूर्न प्रेमायतन

१. कौसिक = उल्लू।

यह पद्य पं० श्रीधर पाठक ने रीवां के बाल नटेश को प्रयाग में १४ मार्च सन् १८९१ को दिया था।

कानग्रेस बधाई

श्रीभारत भारती प्रनय पूरन परिचायक
न्यास करन नृप नीति, प्रजा जन प्रीति विधायक
शनैः शनैः प्रति निधि शासन पन्था संस्थापन
नेम ग्रथित सुख नेमि १ सनेह सनेह बनावन
लवलेश कलेशादिकन कौ देश माहि शेष न रहै
कारज सोई कीजै सुगम बार बार नृप सों कहै

नगर नगर सों ह्वै प्रतिनिधि पाहुने पधारे
ग्रेट ब्रिटन गुन गाथा गौरव गावन हारे
सोभा सुठि अनुराग उदधि मदरास जुड़ाई
भरित नेह नव नदी उमँगि भेटन उमड़ाई
बरसाय आसघन विन्दुकन, त्रास निधन, विश्वासघन
तुलना पाइय नहिं जासु जग, जातिसभा आनँद सदन
भावित भारत भार हरन सौभाग्य विवर्द्धन
रक्षण मान मृजाद आदि जातीय परम धन

१ नेमि = धुरा

तन मन धन सों प्रगटि भारतेश्वरी चरन रति
शुद्ध भाव युत सुमिरन तिहि प्रन अरु भारत गति
भावै नेंक न जनता १ विषैं विषम भाव ममता जनित
यह सफल होउ सो देसमें "कानग्रेस" जातीय नित

(जनवरी, १८८८)

लार्ड रिपन का प्रयाग आगमन

अहो ! महामहोत्सव प्रागराज
प्रभु रिपन आगमन हेतु आज
चहुंओर मच्यौ आनन्द ढेर
गुन गवत रिपन के बेर बेर
प्रमुदित सब नर और नगर नारि
रहे घर घर प्रभु कौ जस उचारि
सब सुजन सुमति कीन्ही विचारि
जोरयो चन्दा हिय हरख धारि
दुहुं ओर सड़क के बांस पांति
गढ़वाय सजाई विविध भांति
कछु कछु अन्तर दै कदलि खम्ब
बांधी बहु बन्दन माल अम्ब
घर बगर दुकानन लगे साजि
धरवाइ दिवालन दीप राजि

१ जनता = प्रजा

कहुं लगे झाड़ हांडी गिलास
कहुं लेम्प जोरि कीन्हौ प्रकास
निज निज मुड़गेरिनु बीच द्वार
"स्वागत", "वैलकम", काढ़्यौ संवार
कहुं "लार्ड रिपन की जय" बनाय
धरि दीनी दीपन मांझ धाय
तिहि ठौर नगर वासिन की भीर
दरसन कारन सब अति अधीर
सब अटा अटारिन सड़क बाट
रहे छाय उमड़ि थल दियौ पाट
सिसु, जुवा, वृद्ध, सबहिनु अनन्द
अतिसय प्रफुलित हिय सुजन वृन्द
बोलत जय जय प्रभु रिपन केर
ऊंचे सुर सों सब बेर बेर
हेरत हुलसे हिय सबै बाट
आवें किहि छिन प्रभु रिपन लाट
इतने बिच निकसे घुड़ सवार
सब सजे, सुदृढ़ असि नग्न धार
लगे कहन लोग अब आए लाट
मचिगयौ सोर लगी हिलन हाट
चारहु दिक जय जय की पुकार
ऊंचे सुर मचि रही बार बार
करताल बजत, फहरत रुमाल
"जय लार्ड रिपन", जय प्रभु दयाल

फेंकत प्रभु ऊपर फूल माल
रहै अचल रिपन कीरति विसाल
जय रिपन होय तव रिपुन कोय
चिरजीवौ तुम विक्टोर्या दोय
कीन्हौं जैसौ तुम ह्यां विवेक
लीजै तैसौ सन्मान देख
यहां लाट लोग आए अनेक
पर जय लायक भए तुम ही एक
बोलौ सब ठौरन राह बाट
जय रिपन लाट, जय रिपन लाट
अवलोकि महोत्सव प्राग राज
श्रीधर पावत सुख अतुल आज

(२९. ११. ८३)

ग्राउस साहब का वैकुण्ठवास¹

(भारत का शोक)

हाय ! कहा दुर्दैव आज अनरथ तैं कीनौ
हम दुखियन कों एक और दारुन दुख दीनौ
अबकें हमरौ कौन कर्म खोटौ करि पायौ
जाकौ बदलौ लियौ आज तैनें मन भायौ
केशव, कृष्टो, हरिश्चन्द्र, ब्रैडला सिधारे
तथा अजुध्या नाथ हते हमरे जो प्यारे
इनके विषम विछोह अजहुं अंसुआ नहिं सूखे
अजहुं न पुरये घाय हिये हैं दारुन दूखे
एक एक करि गये अनेकन मीत हमारे
भारत उन्नति हेत रहे जो सुदृढ़ सहारे
आयी अब की बार ग्रौस साहब की बारी
मातृ भूमि निज माहि देह त्यागी संसारी

(उन्को जानने वाली प्रजा का शोक)

सुनिकें विषम विषाद भयौ भारत में भारी
रोवत करि करि सुधि जहं तहं केतिक नर नारी

---

१ "कवि व चित्र कार" के सम्पादक पं० कुन्दन लाल के अनुरोध से निर्मित। और उस पत्र में प्रकाशित।

नैनीताल। ६ जून, १८९३

हाय "गुरू" साहब, ठाकुर जी मानन वारे
कहां गये तजि हमें हमारे परम पियारे
पिंशन पाय बुढ़ापे में नेंकहु नहिं भोगी
तजि दीनौ संसार तजै जैसे कोउ जोगी

(उन्के गुण)

अंगरेज़ी अरु फ़रासीस भाषा कौ पण्डित
संस्कृत हिन्दी रसिक विविध विद्या गुन मण्डित
गुनियन कौ सर्वस्व, दीप निज सेत दीप कौ
परम भक्त सेवक सुज़ान अपने महीप कौ
विद्या बुद्धि विवेक विनय बाचा चतुराई
इन सब सों संजुक्त, न्याय अरु सत्य मिताई

(उन्के दो एक प्रसिद्ध कार्य)

पश्चिम उत्तर देश माहि करि नृप सिवकाई
राखी प्रजा प्रसन्न सुकीरति बहु विधि पाई
मथुरा नगरी तथा फ़र्रुख़ाबाद मझारी
कीन्हौ बहु उपकार थान जीरन उद्धारी
व्रज मंडल कौ ग्रन्थ माहि बहु वर्नन कीनौ
विविध भांति सों गूढ़ विषय दर्सित करि दीनौ
निज बानी में कीन्हीं तुलसी कृत रामायन
जासु अमी रस पियत आज अंगरेज़ी बुध गन

(उपसंहार)

ऐसौ गुनी गुरूस आज सुर धाम सिधायौ
सुजस एक रहि गयौ सेस छिति माहिं समायौ

कुटिल काल गति काहू ने कबहूं नहिं जानी
मूरख हैं वे जा जग में ममता जिन मानी

घन दिग्विजय१

नवल घन कनक मय पीठ नव रतन युत,
झलक लहि दीठ है जात बिन काम की।
सिंह आसन, वसन इन्द्र धनु वर वरन,
करन भ्रम भंग युत बुद्धि विधि वाम की॥
विविध मनि नील नग लसत मनु चंड रवि
दंड लहि बन्दि गृह बन्द घन धाम की।
घना घन सघन घन उग्र मन व्यग्र कर,
बरनि छवि लजत कवि अग्र तिहि ठाम की॥
नील नभ, नील नव नीर निधि, मुदित जहं,
नील अरविन्द अलि वृन्द घन मालिका।
नील कंठालि कल नाद श्रुति स्वाद सुख
स्वेत सुठि पांति मड़रांति बक वालिका॥
नील कहुं, स्याम कहुं, लाल सु ललाम कहुं,
चपल वहु रंग, दिसि अन्त घन जालिका।
नील निभ शृंग धर उच्च गिरिवर सिखर,
उदित जहं मन्द छवि, चन्द लघु थालिका॥

१ यह पद्य सन् १८८९ में आरम्भ किया था परन्तु इस्का पूरा होना अवकाश के आधीन है।

नचत तहं विज्जुमय विविध आयुध साजित,
वीर वर, करत नव नारि मिलि हेलिका ।
मचत आनन्द अति, हास, परिहास, कल
गान सुर तान, सुख खान, रति केलिका ॥
लचत मृदु अंग, श्रम संग, कल्लोल कृत,
भंग वपु लखत लजि होति रति चेलिका ।
जचत तिहि निकट तिहुं लोक मनु शोक गृह,
धन्य सोभा सुघर, विश्वअवहेलिका ॥

शंख भेरी मृदंगादि अव मान कर,
बजत तहं विविध विधि दिव्य वाद्यावली ।
करत सुबखान, सुखमान, गन्धर्व गन,
विमल बहु छन्द परिबद्ध विरुदावली ॥
सुभग नभ यान चढ़ि विबुध वर लाडिलीं
लखति रुचि सहित मन मुदित सोभा भली ।
आज वर्षाधिपति वर्ष उत्सव महा
मोद उल्लसित घन राज पीठ स्थली ॥

होत तहं प्रगट सुविशाल नीलोद निभ,
रुचिर वपु कान्ति अति ओज युत दृष्टि प्रिय ॥
विविध भूषण, सकल अस्त्र शस्त्रादि धर
सुघर गंभीर सुर मधुर अति सदय हिय ॥
संग सोहत युवक, मृदुल सोभा समुद,
रूप अवलोकि, पति भूलि है मदन तिय ।

"जयति घन राज" ! गुञ्जरत सब पीठ थल,
करत उपचार आनन्द बरसत अमिय।
(२१. ९. ८५)

इवञ्जलाइन १

परम पुरातन यह सघन, विपिन भूमि अभिराम
विटपन सों लिपटीं जहाँ, लता ललाम ललाम
खड़ खड़ात तरु दल विकल, लगि सन्ध्या की बात
मनु उदास मन सों करत, कछु निज दुखकी बात
ऊषा आंधे के मलिन, मन्द उजेरे मांहि
देह दूबरे धूँधरे, ते तरु गन दरसांहि
काई की डाढ़ी लसैं दीरघ तिनके गाल
हरित हरित जामान सों, अद्भुत रूप दिखात
मनहुँ पुराने समय के, ड्रूइड २ बांधि कतार
ठाड़े होय सुनावहीं, होनहार कौ सार
डाढ़ी युत ढाड़ीन की, ठाड़ी अथवा लैन ३
कानन गुन गाथा गुहन, कै तिहि धीरज दैन
अति गभीर गह्वरन सो, करि करि शब्द विषाद
बन वारिधि मिलवत दोऊ निज निज आरति नाद

१ Longfellow's Evangeline. यह पद्य सन् १८८६ में आरम्भ किया था—परन्तु इस्का पूरा होना अवकाश पर निर्भर है।

२—Druids. प्राचीन समय के असभ्य अंगरेजों के धर्मगुरु और याजक।

३—लैन = पंक्ति।

अहो भूमि यह वुही, किन्तु वे कहां आज सब
जो या वन की कुञ्जन में, नित विहरत हे तब ?
जिनके कोमल सरल हिये हुलसत हे ऐसें
निज जननी को बोल सुनत मृग सावक जैसें ?
कहं सो सुन्दर गाम, सुघर छालिन सों छायौ
अकेडियन १ कृषिकारन बसि जहं सब सुख पायौ ?
वे किसान अब कहां, सुखित जिनके जीवन दिन
बीतत हे तिहि ठौर, निपट निर्भय चिन्ता बिन ?
ज्यों सरिता जल विमल, बहत सींचत बन बीथिन
निज आश्रित जो हांय, सदा पालत पोसत तिन
बन छाया सों स्याम, सुभग जे सलिल सुहावन
व्योम बिम्ब दरसावन, जग पावन, मन भावन

ऊजर हैं वे खेत सब, सोभा गई नसाय
चले गये कृषिकार सो, उन सब सों विलगाय
उन सब सों विलगाय, भये न्यारे सो ऐसें
प्रबल पवन बल बिखरत हैं, रज के कन जैसें
अकतूबर की आंधिन में, ज्यों पात उड़ाई
बन सों बिछुरि समुद्र बीच फैलत हैं जाई

वे फूलन की बाटिका, वे सुन्दर खरियान
वे बारी क्यारी, विविध तरकारी की खान

१– " अकेडी " वा " अकेडिया " उत्तर आमेरिका के एक प्रायद्वीपका प्राचीन नाम है। आजकल वह " नोवास्कौशिया " करके प्रसिद्ध है।

वे घर, वे दर, वे अटा, वे छप्पर चौपार
सुघर "ग्रांडप्रे" ग्रामकी, सोभाके आधार
वुह जुवतिन के जूथ को, इत उत आवन जान
सरल भाव चितवन, हसन, मृदु मीठी मुसिक्यान
ग्वाल सुतन कौ खेलिवौ, उन धिटपन की छांह
खेल मगन ह्वै नाचिवौ, तिन कौ गहि गहि बांह
मिलिवौ प्रेमी जनन कौ, निज प्यारिन सों धाय
ललकि ललकि हिय लायवौ, मुख मिलाय सुख पाय
हाय दैव तिन कौ तहां, आज दरस क्यों नाहिं
छोड़ि कहानी क्यों न कछु अधिक वच्यौ जग मांहि!

एहो पूरन अचल प्रेम के मानन हारे
नारि पतिव्रत अटल नेम पहचानन वारे
दारुन विरह वियोग भोगि, सहि सहि दुख भारे
तजै न सो पिय मिलन आस, यह जानन वारे
सुनिये एक कहानी, प्रेममयी, मृदुबानी
वनके थावर प्रानी, रोवत जाहि बखानी
सोग विरह बिस सानी, दुख की वात पुरानी
अकेडिया के बीच, विधाता ने जो ठानी

(१८८६)

शवशिला लेख १

पथिक लखहु मम ओर, बात राखहु मन लाई
जैसे तुम हौ आज, कबहुं हमहूं रहे भाई
जैसे हम हैं आज, तुम हुं तैसेहि ह्वै जैहौ
या तें रहहु सचेत, अवसि हमरेहि मग ऐहौ

(१४.७.९९)

प्रेमपियाला

प्यारी ! हम ऐसी सुनी, कठिन पन्थ है प्रीति
रीति न जाने प्रीति की, जब लग नहिं परतीति
बीज प्रीति को प्रेम है दुर्लभ जगमें सोय
जहां प्रेम तहां प्रीति है सो बिरलेन कों होय
प्रीति निबाहन कठिन है प्यारी ! या जग माहिं
तन मन सरवसहू तजै तौहू निबहति नाहिं

१-यह इस Epitaph का अनुवाद है-

Stranger, remember, as you pass by,
As you are now, so once was I;
As I am now, so you must be
So be prepared to follow me.

निहचैं या संसार में दुर्लभ सांचौ नेह
नेह जहां सांचौ तहां कहां प्रान कहां देह
बिरलेन हीं कों है सुलभ सांचौ सरल सनेह
जहां निपट स्वारथ बसै तहां न ताको गेह
प्रीति रीति जाने बिना, भूलि न कीजै प्रीति
बिन जानै कारज करै परै बहुत विपरीति
प्रीति निबाही जिन प्रिये ! जीति लियो संसार
या "असार" संसार में एक प्रीति ही सार
प्रीति प्रथा अति पावनी, जानत नाहिं सब कोय
पहचानत पूरन प्रिये ! हरिजन प्रेमी दोय
लीन होत प्रेमी रसिक निज प्यारे के संग
श्रीभगवत भक्तन सरिस दीपक लोय पतङ्ग
प्रिये ! प्रेम मग जे चले भले रहे जग माहिं
सुख सुहाग अनुराग की डगर दूसरी नाहिं
निहचैं या संसार में बड़भागी नर दोय
हरिचरनन चित जिन दियौ पियौ प्रेम मद होय
प्रेम नेम साधन कठिन करचौ कौन पै जाय
उनहीं सों कछु निभि सकै लेय जिन्हैं अपनाय
प्रेम पियाला जो पिये मतवाला हो जाय
कढ़ै कसाला जीय का नेह निवाला खाय
प्रेम विहाला होय कें सुधि बुधि सबै गंवाय
जपै जो माला नामकी जग जाला जरिजाय
प्रेम पियाला जिन पिया जिया वुही जग माहि
हुआ निहाला सब तरह, पूरे भाग सराहि

प्रेमी प्रेम प्रवाह में परे सो लौटै नाहिं
पहुँचे समुद अथाह में डूबि मरे जल माहिं
प्यारी ! प्रेम समुद्र की मिली न काहू थाह
बूड़ि बूड़ि पचि पचि मरे केतिक खरे मलाह
धरनी धसै पताल कों पर्वत उड़ें अकास
रवि सीतल ह्वै जाय पै प्रेम अटल अविनास

(१९.११.९३)

९४

निह
नेह
विर
जह
प्रीरि
बिन
प्रीरि
या
प्रीरि
पह
लीन
श्री
प्रिये
सुख
निह
हरि
उन
प्रेम
कढ़ै
प्रेम
जपै
प्रेम
हुअ

पुस्तक वितरण की तिथि नीचे अंकित इस तिथि सहित १५ वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५ नये पैसे प्रतिदिन हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

	४१,६२०	

सूचना

पं० [illegible] पाठक [illegible] पुस्तकें निम्न
पते से मिल सक्ती हैं

मैनेजर राजपूत
आगरा ।